लक्ष्मीनारायण लाल

•

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

सुन्दर रस

[तीन अंकों का प्रहसन]

*

लक्ष्मीनारायण लाल

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

लोकोदय ग्रन्थमाला : ग्रन्थांक : १००
सम्पादक एवं नियामक
लक्ष्मीचन्द्र जैन
तृतीय संस्करण : सितम्बर १९७१

सुन्दर रस

(नाटक)

लक्ष्मीनारायण लाल

प्रकाशक
भारतीय ज्ञानपीठ
३६२०/२१, नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६

मुद्रक
सन्मति मुद्रणालय
दुर्गाकुण्ड मार्ग, वाराणसी-५

o o o o

SUNDER RAS

(Play)

Lakshmi Narain Lal

Published by : BHARATIYA JNANPITH
3620/21, Netajee Subhash Marg, Delhi-6
(*Phone :* 272582. *Gram :* 'JNANPITH', Delhi)

Price
Rs. 4.00

मूल्य : चार रुपये

प्रथम संस्करण की भूमिका

●

मैं ने अनुभव किया है कि जैसे व्यक्ति पूर्णतः अपने प्रत्यक्ष रूप और शरीर में नहीं, अपने कर्मों के दर्पण में दिखता है, ठीक उसी भाँति नाटक पाण्डुलिपि में नहीं, अपने अन्तर्निहित रंगमंच में अभिव्यक्त होता है। और तभी इस आत्मिक कसौटी से पाण्डुलिपि में छिपे नाटक की निर्बलता और शक्ति का प्रत्यक्ष ज्ञान और अनुभव व्यावहारिक प्रस्तुतीकरण से प्राप्त होता है। इसी अनुभव से लाभ उठाते हुए, प्रस्तुतीकरण के उपरान्त मैं ने फिर से 'सुन्दर रस' को लिखा है। इस नव संस्करण में बहुत कुछ घटाया-बढ़ाया गया है—उदाहरणस्वरूप अब जैसे, अध्यापक—एक चरित्र ही कम हो गया है।

मुझे विश्वास हुआ है, नाटक लिखना, रंगमंच ढूँढ़ना है, और रंगमंच ढूँढ़ना वास्तव में एक यज्ञ है—जिस में बहुत बलि देनी होती है, बहुत सी चीज़ों की; सब से पहले अपने अहं की, फिर····

यह संस्करण

●

गत वर्ष दिल्ली विश्वविद्यालय की एक नाट्य-संस्था के लिए इस नाटक पर रंगकार्य करते हुए मैं ने इसे नये सिरे से फिर लिखने की अनिवार्यता अनुभव की ।

प्रस्तुत संस्करण 'सुन्दर रस' का सर्वथा नया रूप है ।

—लक्ष्मीनारायण लाल

नयी दिल्ली
४-११-'६६

"लो मित्र, शीतल जल पियो !"

[कलकत्ते के मंच पर, नाट्य केन्द्र इलाहाबाद द्वारा प्रस्तुत, 'सुन्दर रस' का एक दृश्य—स्वयं लेखक पण्डितराज (कविराज) की भूमिका में। भट्टाचार्य की भूमिका में जीवनकृष्ण बनर्जी]

"देवि माँ, अन्दर चलिए""हाँ देवि, अन्दर........" [इलाहाबाद के मंच पर प्रस्तुत 'सुन्दर रस' के दृश्य में देशी सेठ देवि माँ की भूमिका में और पण्डितराज की भूमिका में जीवनलाल गुप्त]
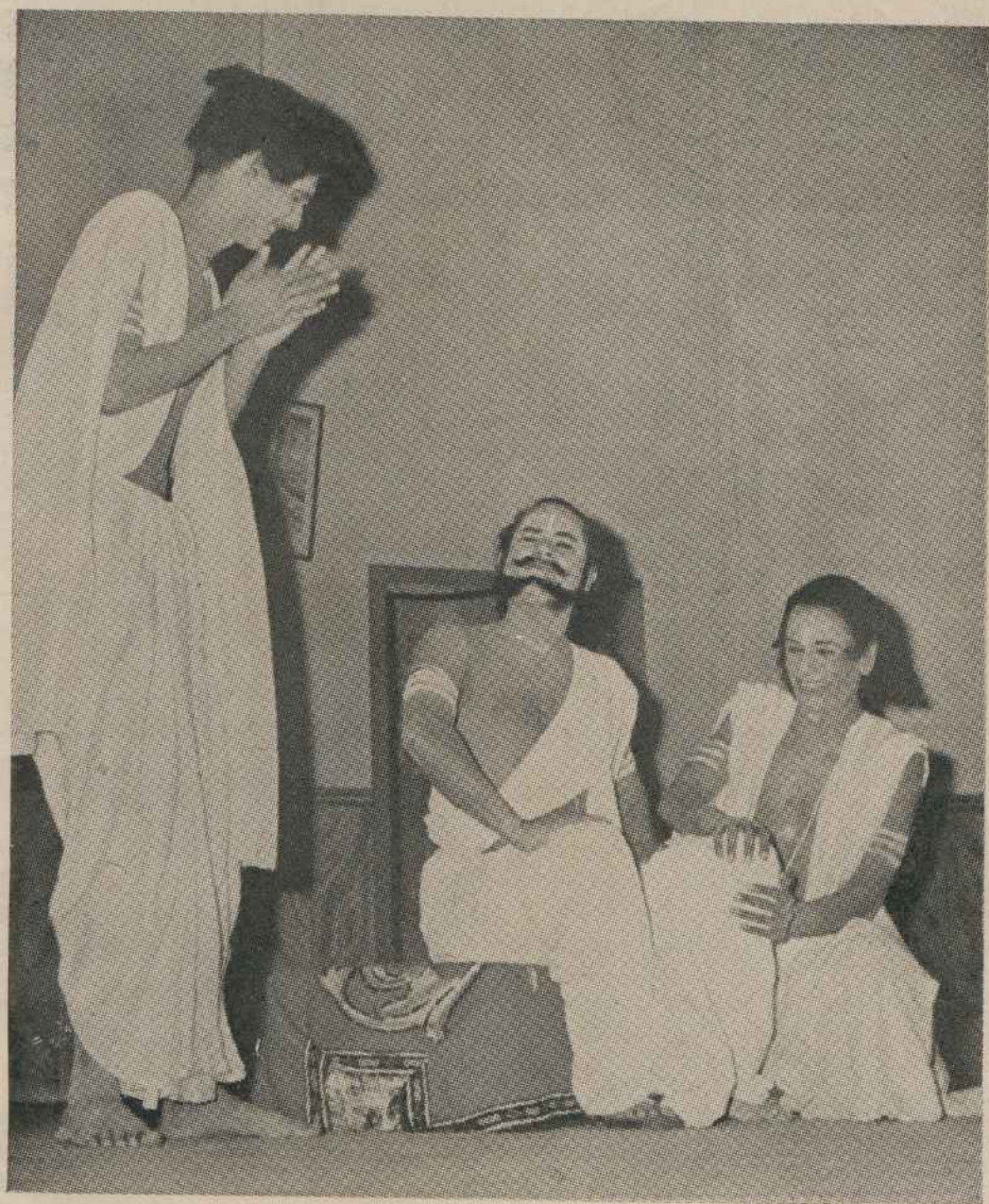
"सुन्दर रस एक महान् औषध है !"

कलकत्ते के मंच पर 'सुन्दर रस' का दृश्य—कविराज अपने शिष्यों को दीक्षा देता हुआ]

"ये कौन लोग हैं ?" "वही आप के शिष्य····!" [कलकत्ते के मंच पर 'सुन्दर रस' का एक दृश्य— देवि माँ की भूमिका में हीरा चड्ढा और पण्डितराज की भूमिका में स्वयं लेखक]

"बस, अब उस ब्रह्म का ध्यान कीजिए·····!"

[इलाहाबाद के मंच पर—वकील साहब को कविराज 'सुन्दर रस' पिलाता हुआ]
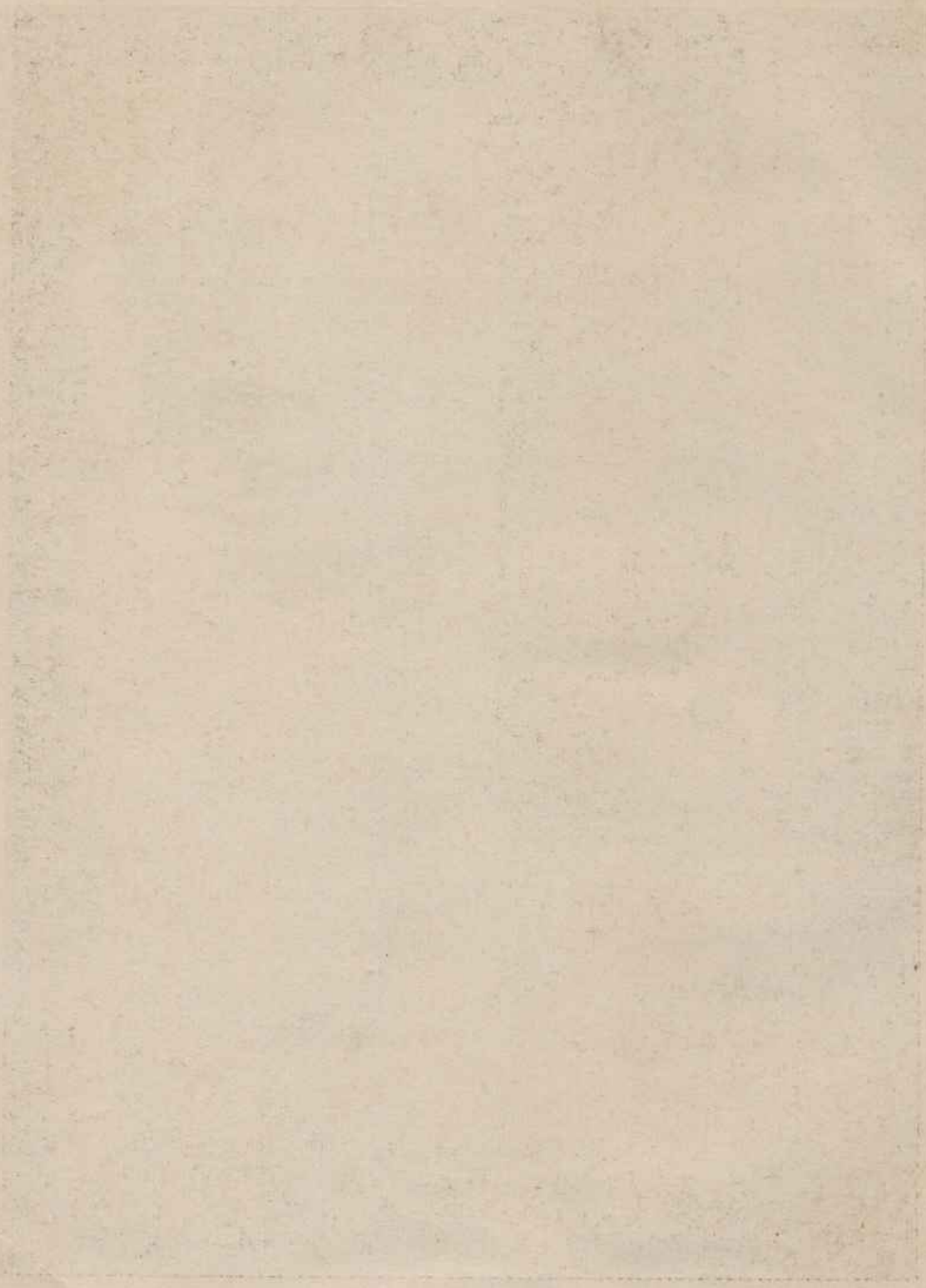
'सुन्दर रस'—सर्वप्रथम नाट्यकेन्द्र, इलाहाबाद, द्वारा ४ नवम्बर १९५८ को पैलेस थियेटर में प्रस्तुत किया गया।

भूमिका में :

पण्डितराज [कविराज]	जीवनलाल गुप्त
देवि माँ	देशी सेठ
भट्टाचार्य	डॉ० सत्यव्रत सिनहा
शक्तिदेव	रामचन्द्र गुप्त
जैनाथ	शिवाजी मिश्र
बीना	उषा वर्मा
केदार [वकील]	हृदयनारायण टण्डन
सुमिरन	राजेश्वरप्रसाद
अध्यापक	राजकरन सिंह

मंच-सज्जा, आलोक, वस्त्र एवं रूप-विन्यास—सब नाट्य-केन्द्र द्वारा परिचालित प्रशिक्षण-केन्द्र के सहयोगी सदस्यों (विद्यार्थी वर्ग) द्वारा सम्पन्न हुआ, और इस का निर्देशन स्वयं लेखक ने किया।
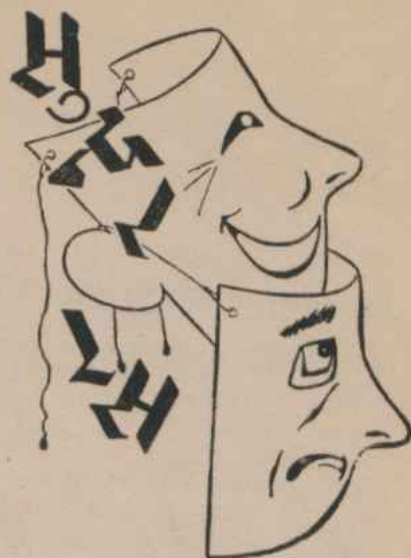
पात्र

●

कविराज

देवि माँ

शक्तिदेव

जैनाथ

भट्टाचार्य

वकील साहब [केदार]

बीना

सुमिरन

अन्य : बोतल वाला, सब्ज़ी-फल वाला
और बाजा वाला ।

पहला अंक

[कविराज के घर का बाहरी कमरा। पीछे दरवाज़ा है, जो क़रीब-क़रीब गली में खुलता है; और सामने बिलकुल सड़क-जैसा रास्ता चलता है। बायीं ओर, भीतर घर में आने का रास्ता है।

कमरे में दायीं ओर एक छोटा सा आसन लगा है, कविराज जिस पर बैठते हैं; और बायीं ओर शिष्यों के बैठने के लिए लकड़ी के दो छोटे-छोटे आसन दीख रहे हैं। कमरे में इस के अतिरिक्त और विशेष कुछ नहीं है, हाँ, पीछे दीवार में कविराज के गुरु महाराज का चित्र अवश्य लगा है।

पीछे का दरवाज़ा खुलता है। कविराज के दो शिष्य—क्रमशः शक्तिदेव और जैनाथ हाथों में पुस्तक लिये प्रवेश करते हैं और अपने-अपने आसन पर बैठ कर स्वाध्ययन में लग जाते हैं। घर में से, कुछ ही क्षणों बाद कविराज पूजा की मुद्रा में निकलते हैं—अपनी अंजलि में पुष्प लिये हुए। शिष्य दौड़ कर गुरु का चरण स्पर्श करते हैं। कविराज उन्हें रोक कर, पहले अपने गुरु के चित्र पर पुष्प चढ़ाते हैं, फिर शिष्यों का अभिनन्दन स्वीकार करते हैं। और अपने आसन पर बैठने लगते हैं ········]

कविराज : कहो, तुम लोगों की पढ़ाई ठीक चल रही है न ?

दोनों : [एक साथ] हाँ, बिलकुल ठीक गुरुजी !

कविराज : एक-एक कर के बोलो !

जैनाथ : पहले मैं बोलूँ गुरुजी !

शक्तिदेव : नहीं, पहले मैं बोलूँगा गुरुजी !

कविराज : हाँ, हाँ, झगड़ो नहीं, झगड़ो नहीं ।

जैनाथ : गुरुजी, यह शक्तिदेव मुझे अँगरेज़ी ढंग से आँख दिखाता है ।

शक्तिदेव : नहीं गुरुजी, यह जैनाथ मुझे संस्कृत स्टाइल से जीभ दिखाता है ।

कविराज : अरे भाई धीरे बोलो, धीरे····और धीरे, नहीं तो । यहाँ अभी तुम्हारी देविमाँ आ गयीं तो लंकाकाण्ड शुरू हो जायेगा ।

[दोनों एक दूसरे के मुख पर हाथ रख कर चुप हैं ।]

कविराज : मुख पर से हाथ हटाओ, और कान खोल कर सुनो !

[दोनों झट अपने-अपने कान बन्द करते हैं ।]

कविराज : यह सुन्दर रस मैं ने कैसे बनाया, यही तुम लोग जानना चाहते हो न ?

[दोनों भाग कर गुरुजी के पास आते हैं और उन के चरण दबाने लगते हैं ।]

कविराज : इस सुन्दर रस की खोज के पीछे एक अजब कहानी है ।

शक्तिदेव : कहानी—'स्टोरी' !

जैनाथ : गुरुजी देखिए यह अँगरेज़ी बोलता है !

कविराज : मेरी 'वाइफ़', यानी तुम्हारी देविमाँ भी अँगरेजी पढ़ी-लिखी हैं !

दोनों : [परस्पर] वाइफ़····वा इ फ़····गुरुजी भी अँगरेज़ी···· वाइफ़ ?····वाइफ़····?

कविराज : चुप रहो, कहानी सुननी है या नहीं ?

शक्तिदेव : गुरुजी, दरवाजा बन्द कर दूँ, नहीं तो कहीं कहानी अधूरी न रह जाये !

कविराज : मैं धीरे-धीरे बोलूँगा । [रुक कर] जब मेरी शादी हुई ।····

जैनाथ : शादी ?

शक्तिदेव : चुप रहो ।

कविराज : तुम्हारी देविमाँ ग़ज़ब की बदशकल थीं !

शक्तिदेव : बदशकल !

कविराज : हाँ हाँ, असुन्दर !

शक्तिदेव : ओह ! 'अगली', 'अगली' !

कविराज : यह क्या गन्दी आदत है तुम्हारी, बीच-बीच में म्लेच्छ भाषा बोल उठते हो ?

शक्तिदेव : क्षमा सर, सच बात यह है कि मैं हर बात 'थुरू' अँगरेज़ी समझता हूँ ।

जैनाथ : बचपन में इस की माँ ने अँगरेज़ी दूध पिलाया था !

शक्तिदेव : अबे माँ नहीं, ममी····ममी····ममी···· !

कविराज : अरे ओ ममी के बच्चे, ज़रा धीरे-धीरे बोल !

जैनाथ : तू वहीं दूर बैठ !····हाँ, गुरुजी सुनाइए कहानी !

कविराज : अब क्या सुनाऊँ कहानी ! जाओ तुम लोग वैद्यक की पुस्तक पढ़ो । जाओ, काम करो अपना ।

शक्तिदेव : गुरुजी, स्टोरी का क्लाइमेक्स ही बता दीजिए !

जैनाथ : फिर वही···।

कविराज : मैं ने सुन्दर रस की खोज की, और इस से देविमाँ को इतनी सुन्दरता दी ।

शक्तिदेव : और क्लाइमेक्स ?

कविराज : इस से भी ज्यादा और क्या हो सकता है !

दोनों : हाय !

[कविराज तेज़ी से भीतर जाते हैं ।]

जैनाथ : ले, अब आज की पढ़ाई गयी न ?

शक्तिदेव : तो इस्टोरी का क्लाइमेक्स मुझ से सुन ! ... हमारे गुरुजी की वाइफ़ सुन्दर तो हो गयीं, पर तभी से पागल जो हो गयीं ! [दर्शकों से] बात आप लोग समझ गये न !... मैं भी इसी चक्कर में यहाँ रोज चरकसंहिता पढ़ने आता हूँ । सुन्दर रस का जिस दिन गुरुमन्त्र मुझे मिला, कनाट प्लेस में वह दुकान खोलूँगा 'इण्टरनेशनल ब्यूटी क्लीनिक'....। डॉक्टर शक्तिदेव, आई० वी० के०, एच० एस० डब्ल्यू० एन० ।

जैनाथ : और जो तुम्हारी दवा से लोग देविमाँ की तरह पागल हो जायेंगे, तब ?

शक्तिदेव : तब तक मुझे कौन ढूँढ़ पायेगा ? कहीं यहाँ, कहीं वहाँ, कहीं इस देश, कहीं उस देश....कहीं यह भेश, कहीं वह भेश, कहीं जमीन कहीं आसमान....।

[भीतर देविमाँ और कविराज की आवाज़ उठती है । देविमाँ ऊँचे स्वर में बोलती हैं—'हटो, भागो, बचो' । कविराज उन्हें सम्हालते हुए कह रहे हैं 'नहीं-नहीं बाहर मत जाओ, यहाँ बैठो, यहाँ]

जैनाथ : सावधान ! भीतर महाभारत शुरू हो गया है ।

शक्तिदेव : वह आ रही हैं देविमाँ ! जै हो····जै हो देविमाँ की ! आप जैसी औरत····आहा हा ! आप जैसा भाग्यवान्····ओ हो हो ! जै हो माँ···· ! [देविमाँ का प्रवेश । सुन्दर स्त्री, पर आधी पागल । पीछे-पीछे कविराज ।]

कविराज : सावधान ! रोको इन्हें, बाहर मत जाने दो !

दोनों : रुकिए माँजी, माँजी रुकिए !

देविमाँ : धत्तेरे की ! [हँसती है] शिष्यगण, अपने गुरु से कहो, वह अन्दर जायें । मैं इन की सूरत नहीं देखना चाहती ।

कविराज : इन के सामने तो ऐसा न कहो ! चलो, जो कुछ कहना है, भीतर चल कर कहो !

देविमाँ : क्या भीतर क्या बाहर ? क्यों शिष्यगण ?

शक्तिदेव : बराबर माँजी बराबर ! ···वंडरफुल !

[तभी गली में से आवाज़ : 'रद्दी अखबार और बोतल वाला,' देविमाँ बढ़ कर पुकारती हैं ।]

देविमाँ : ओ काग़ज़ बोतल वाले !

कविराज : रोको, रोको इन्हें ! काग़ज़ बोतल वाले से मना कर दो कि वह यहाँ हरगिज़ न आये !

देविमाँ : [सक्रोध] तेरी यह हिम्मत ! [आवेश में कविराज की ओर बढ़ती हैं । कविराज भागते हैं । भीतर से दौड़ा हुआ नौकर सुमिरन आता है ।] जा, भीतर से सब बोतलें और अखबार उठा ला !

सुमिरन : हाय सत्यानाश !

देविमाँ : क्या कहा रे ?

सुमिरन : अरे सीधे घर माँ चली, अखबार बखवार कहीं कुछ नाहीं ना !

[अखबार वाले की फिर आवाज़]

देविमाँ : आ न अखबार वाले !

सुमिरन : अरे भगाओ ओंका ! माँजी अन्दर चलिए ! ओहर मत देखिए ! सीधे घर माँ चलो हाँ, हाँ हाँ हाँ, ओहर कुछ नाही न·····!

[दूसरी ओर उधर दोनों शिष्य अखबार वाले को भगा रहे हैं ।]

शक्तिदेव : जा भाग जा !

जैनाथ : अरे भागता है कि····

शक्तिदेव : क्यों हमारी जान लेने पर तुला हुआ है ?

सुमिरन : माँजी, अन्दर चलिए ।

देविमाँ : धत्तेरे की !

सुमिरन : [मनाता हुआ] नहीं माँजी, वह देखिए आय गवा । [गली की ओर बढ़ कर] ओ बाजे वाले·····इधर आओ । [देवि से] इधर आइए माँजी, आइए, बाजा वाला [भीतर मुड़ता हुआ] भीतर से आइ रहा है ! ओ बाजे वाले ! जल्दी-जल्दी चलिए माँजी ।

देविमाँ : [जाते-जाते] धत्तेरे की ।

[माँ के संग सुमिरन का भीतर प्रस्थान ।]

कविराज : [प्रवेश कर, शिष्यों से] देखा, तुम सब असफल रहे। इसे कहते हैं बुद्धि और विवेक !

जैनाथ : [हाथ उठा कर] इस विवेक में कुछ छल और झूठ के भी तो तत्त्व थे। क्या यह सब मुनासिब है गुरुजी ?

कविराज : न्यायशास्त्र में, प्रयोजन को अत्यधिक महत्त्व दिया गया है। उचित प्रयोजन की सिद्धि के लिए झूठ-सच का विचार नहीं किया जाता।

शक्तिदेव : सच गुरुजी, मैं इस का सदा ध्यान रखूँगा।

जैनाथ : और साधन का विचार गुरुजी ?

शक्तिदेव : बुद्धि का विचार गुरुजी ?

जैनाथ : विवेक का विचार गुरुजी ?

कविराज : जिस का लक्ष्य सुन्दर है, सुन्दर बनने की ओर है, उस के लिए सब उचित है। [रुक कर] इस असुन्दर संसार को हमें सुन्दर बनाना है, इसे वास्तविक सुख एवं आनन्द देना है।

[दोनों शिष्य मुदित होते हैं]

कविराज : इसी लिए समस्त शास्त्रों में मैं ने आयुर्वेद को बहुत ऊँचा पाया। आयुर्वेदाचार्य होने के बाद, हिमालय में रह कर रासायनिक ओषधियों पर मैं ने रिसर्च किया।

शक्तिदेव : धन्य हैं आचार्यजी !

जैनाथ : तभी तो समाज आप को इतनी श्रद्धा देता है !

कविराज : यदि समाज से मुझे श्रद्धा मिली होती, तो 'सुन्दर रस' के साथ ही मैं एक और रस का निर्माण कर चुका होता।

शक्तिदेव : वह नया रस किस रोग के लिए होगा गुरुजी ?

कविराज : क्या बताऊँ ?

जैनाथ : हाँ गुरुजी ! आप कृपा कर हमें अवश्य बताइए।

कविराज : वह विवेक एवं ज्ञान की महान् औषधि होगी। 'विवेक रस' उस का नाम होगा।

दोनों : विवेक रस····दिमाग़ की दवा···· !

[इसी बीच पीछे के दरवाज़े पर फल वाला पुकारता है।]

शक्तिदेव : पर दिमाग़ की दवा कोई नहीं चाहता महराज !

फल वाला : [आवाज़] हरे ताज़े मीठे फल, अंगूर चमन वाले !

कविराज : शक्तिदेव, विवेक से हटाओ इसे, नहीं तो देविमाँ····!

शक्तिदेव : [बढ़ कर क्रोध से] चले जाओ, बको मत ! [जैसे पकड़ने दौड़ता है] भागता है कि नहीं ! भाग गया गुरुजी, नहीं तो मैं सारा बदला चुका लेता।

कविराज : ओ हो, बुलाओ उसे !

शक्तिदेव : [दरवाज़े पर जा कर] प्रिय फल वाले ! ओ फल वाले ! अरे सुनो प्रिय फल वाले !

कविराज : [अप्रसन्न] ओ हो ! तुम चलो इधर ! जैनाथ, तुम फल वाले को पुकारो ! ठाकुरजी के भोग के लिए अंगूर लेना है।

जैनाथ : [दरवाज़े पर जा कर] चले फल वाले, ओ फल वाले, गुरुजी बुला रहे।

कविराज : ओहो ! व्याकरण के अनन्त दोष देखो। फल वाला एक

है, एकवचन। और चले बहुवचन! गुरुजी बुला 'रहे, कि—बुला रहे हैं? क्या अध्ययन करोगे तुम लोग? सदाचार एवं विनय तक का खयाल नहीं।

शक्तिदेव : फल देख कर ज़बान लड़खड़ा गयी महराज!

[फल वाला दरवाज़े पर आता है।]

जैनाथ : मुँह में पानी भर आया जी····!

कविराज : विचार करो तुम लोग। अपनी-अपनी त्रुटियाँ देखो [दरवाज़े पर जा कर अंगूर ख़रीदते हैं, फल वाला चला जाता है, कविराज घर में जाते-जाते] विचार करो, विचार, फल की ओर मत देखो। गीता में श्रीकृष्ण भगवान् ने क्या कहा है, भूल जाते हो? चलो याद करो। 'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन'।

शक्तिदेव : कदाचन···कदाचन····हाय कदाचन····।

[कहते हुए पण्डितजी अन्दर चले जाते हैं। दोनों शिष्य एक दूसरे का मुँह देखते हैं।]

जैनाथ : [याद करते हुए] फल वाला एकवचन, चले बहुवचन। आगे चले बहुरि रघुराई—रघुराई, एकवचन, चले—चले—चले बहुवचन। नहीं, कभी नहीं, गोस्वामी तुलसीदास····चले···चले।

शक्तिदेव : चुप रहो, चुप रहो···चले····चले! चले चले क्या? [नक़ल करता हुआ] ऐसे बोलो, अंगूर चमन वाले। चमन वाला अंगूर···!

जैनाथ : चुप रहो, एक बार वाला, दूसरी बार वाले, इतना व्याकरण दोष!

शक्तिदेव : अमे व्याकरण रख भोजनालय में। अपनी तो नज़र है प्यारे 'सुन्दर रस' पर। किसी तरह एक खुराक मिल जाये, बस फिलिम में हीरो !

जनाथ : चुप.....चुप.....किसी ने सुन लिया तो ?

शक्तिदेव : भाई, हमें तो देविमाँ से ही भरोसा है, बड़ी सीधी और नेक हैं। एक खुराक मिल गया तो दिलीपकुमार.....

[एक फ़िल्मी गाना गाता है।]

जैनाथ : अरे सँभल कर.....धीरे-धीरे !

शक्तिदेव : अरे धीरे-धीरे क्या ? अब मामला क़रीब है !

जैनाथ : जल्दी से माँग लो, नहीं तो गुरुजी ने कहीं अगर.....।

शक्तिदेव : चुप, 'गुरुपत्नी की निन्दा करहीं। सात जनम तक नर्कहि परहीं।'

जैनाथ : आचार्यजी आ रहे हैं ! [पढ़ने लगते हैं।] चला एक-वचन, चले बहुवचन। चला चला चला, चले चले चले !

शक्तिदेव : 'आगे चले बहुरि रघुराई'.....। चले एकवचन,.....चले... चले...नहीं-नहीं बहुवचन। .....हाय हाय, मा फलेषु कदा-चन.....कदाचन.....

[भीतर से कविराज का प्रवेश]

कविराज : खड़े क्यों हो, आसन ग्रहण करो।

शक्तिदेव : हम लोग अच्छे लड़के हैं न !

[सब आसन ग्रहण करते हैं]

शक्तिदेव : गुरुजी, हमें कुछ इनाम दीजिए न !

कविराज : मेरी कामना है कि समस्त संसार, मानव प्राणी सुन्दर हो जायें। मैं कहीं कुछ भी असुन्दर नहीं देखना चाहता। परन्तु, क्या किया जाये, यहाँ रहते मुझे तेरह वर्ष हो गये, मैं कभी ऐसे स्थान में नहीं रहा। ऐसी गली, और सड़क के बीच। पर मैं प्रसन्न हूँ, ज्ञानसागर में विचरने वाले प्राणी को क्या कष्ट? सर्वभूतेषु चात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि।

[गली से आवाज़ आती है, साग-सब्ज़ी वाला, आलू, टमाटर, मूली, गाजर! दोनों शिष्य गुरुजी का मुँह देखते हैं।]

कविराज : शक्तिदेव, जाओ तुम दरवाज़ा बन्द कर लो। मेरा मुँह क्या देखता!

शक्तिदेव : आप कित्ते सुन्दर हैं!

[शक्तिदेव दरवाज़ा बन्द करने जाता है, इसी समय भीतर से देविमाँ दौड़ती हुई आ कर उसे रोक देती हैं।]

शक्तिदेव : मैं नहीं·····गुरुजी·····! गुरुजी·····गुरुजी!

देविमाँ : [दौड़ती हुई आ कर] है·····है·····है! धत्तेरे की! दरवाज़ा क्यों बन्द करते हो? चलो पढ़ो·····क·····माने कौआ, ख·····माने खरगोश, ग·····माने गधा। चलो याद करो!

सब्ज़ी वाला : माँजी क्या लेना है?

देविमाँ : धत्तेरे की, सब लेना है!

[बढ़ कर साग-सब्ज़ी लेने लगती हैं।]

कविराज : सुमिरन ! ओ सुमिरन, बहुत समझदारी से ! देखो सम्हाल के ! [सुमिरन आ गया है] इस बार मामला कुछ··· सावधान !

सुमिरन : का बताई ऐसन मेहरारू कैं ! अरे ओ मा जी, घर में आवा हैं घर में [गा पड़ता है] 'जन्मे कृष्न कहैया बिरिज मा बाजै बधैइया'···

शक्तिदेव : बकअप सुमिरन !

कविराज : खामोश !

देविमाँ : देख मूली है मूली ! जन्मे कृष्न कन्हैया, बिरिज मा बाजे····।

सुमिरन : ओ सब्ज़ी वाले ! बस····बस····बस ···चला जा यहाँ से ।

देविमाँ : कहाँ रे कहाँ ?

सुमिरन : अन्दर···घर मा····।

देविमाँ : आलू भाँटा सेम । हम साहब तुम मेम !

कविराज : हाँ हाँ। हम मेम तुम साहब ! अब घर में जाओ, घर में ।

देविमाँ : नहीं जाती····क्यों जाऊँ !

[देविमाँ सामने ही बैठ जाती हैं ।]

कविराज : उठो····उठो यहाँ से !

देविमाँ : धत्तेरे की ! मैं भी पढ़ूँगी !

कविराज : उठो देवि ! यह तुम्हारे बैठने का स्थान नहीं । यह तुम्हें शोभा नहीं देता ! उठो देवि !

शक्तिदेव : यह हमारे बैठने की जगह है !

[देविमाँ हँसती हुई उठती हैं]

सुमिरन : पानी लाऊँ माँजी !

देविमाँ : मैं कितनी सुन्दर हूँ, देखो न ! मेरे जैसा संसार में और कोई भी सुन्दर नहीं । अब मैं और सुन्दर लग रही हूँ न ! मैं कितनी सुन्दर हूँ । धत्तेरे की !

कविराज : ऐसे न खड़ी रहो । जाओ भीतर चलो ।

शक्तिदेव : हाय क्या शाट है !

[सुमिरन दौड़ कर भीतर से बाजा लिये आता है]

देविमाँ : शिष्य लोग !

दोनों शिष्य : हाँ, माँजी.....आज्ञा !

देविमाँ : खबरदार ! दरवाज़ा मत बन्द करना ।

दोनों शिष्य : धन्य हैं आप ! अब यही होगा !

[देविमाँ सामने बढ़ने लगती हैं । सुमिरन बाजा बजाता हुआ उन्हें रोकता है ।]

सुमिरन : इधर सड़क अहै माँजी । उधर नहीं । लेव ई बाजा बजाओ ।

देविमाँ : वह देखो । वह देखो वह । रिक्शे पर बैठे हुए वकील साहब जा रहे हैं केदार बाबू एम०ए०, एल०एल०बी० । आचार्यजी..... ।

कविराज : हाँ देवि !

देविमाँ : हाथ जोड़ कर बोलो !

कविराज : लो.....अब बोलो.....!

देविमाँ : याद है तुम्हें ! वह देखो.....वह वकील साहब एक खुराक सुन्दर रस पी गये हैं न ! तभी, बहुत अकड़ कर रोब से

चले जा रहे हैं। मेरे जैसा संसार में और कोई सुन्दर नहीं।
[उसी अकड़ी हुई मुद्रा में चलने लगती हैं। सुमिरन बाजा बजाता हुआ तथा एक हाथ से देविमाँ को पकड़े हुए अन्दर ले जाता है। कुछ ही क्षणों बाद गली से किसी की आवाज़ आती है।]

आवाज़ : शुनो भाई शुनो''''हम पूछना मागता है—आयुर्वेदाचार्य का मकान यही है ?

कविराज : शक्तिदेव ! देखो कौन पुकार रहा है ?

शक्तिदेव : बड़ा डिस्टर्ब करते हैं लोग !

[शक्तिदेव गली के दरवाज़े पर आता है।]

शक्तिदेव : कौन हैं आप !

उत्तर : के० सी० भट्टाचार्य।

[शक्तिदेव लौट कर कविराज को बताता है।]

शक्तिदेव : गुरुजी, कोई के० सी० भट्टाचार्यजी पधारे हैं।

भट्टाचार्य : ओ बन्धु ! तुम्हारा खोखा है खोखा ! जो गुरुकुल में भी छिप कर माच्छ भात खाता था।

[भट्टाचार्य को देखते ही कविराज गले से मिलने के लिए दौड़ते हैं।]

कविराज : ओहो हो ! के० सी० भट्टाचार्य ! स्वागत ! स्वागत ! मेरे अहोभाग्य ! अहोभाग्य !

शक्तिदेव : वंडरफुल !

[प्रसन्नमुख, अतिथि बन्धु का शिष्यों से परिचय कराते हुए]

यह मेरे गुरुभाई हैं, जिन्हें गुरुकुल में लोग खोखा पण्डित कहा करते थे।""हाँ हाँ, ऐसे काम नहीं चलेगा, चरण स्पर्श करो!

[दोनों शिष्य चरण स्पर्श करते हैं।]

भट्टाचार्य : इन्हें बोताय दो कविराज ! तुमी आयुर्वेदाचार्य तो आमि साहित्याचार्य !

[दोनों शिष्य आश्चर्यचकित देखते रहते हैं]

कविराज : उन स्वर्गिक क्षणों की याद दिलाने तुम कहाँ से आ गये मित्र ! [शिष्यों से] अब जाओ तुम लोग ! अब तुम लोगों की छुट्टी है।

जैनाथ : तो हम लोगों को जाना ही होगा !

[दोनों शिष्य बाहर जाने लगते हैं। कविराज मित्र के समीप बढ़ते हैं।]

कविराज : कहो दोस्त ! तुम ने आज सच बड़ी कृपा की। मेरा जीवन तो बिलकुल बदल गया। कहाँ वह जीवन कहाँ यह""। घर ढूँढ़ने में, कोई कष्ट तो नहीं हुआ ! कहाँ हो आजकल ? कभी पत्र भी न दिया !

भट्टाचार्य : अरे बाबा, राम राम कहो ! हम तो इस बात के लिए डरता था कि तुम मुझे पेहिचान शकोगे या नहीं ! भाई, इतना नाम है तुम्हारा, मुझे घर ढूँढ़ने में क्या कष्ट होता ?

कविराज : मुझे लज्जित न करो ! तुम मेरे गुरुभाई हो।

भट्टाचार्य : अरे बाबा ! मेरा भाग्य कहो। दस वर्ष बाद यह भेंट हुई है। कितने बाल-बच्चे हैं—पहले यह बताओ ! आप ने तो आठ हैं, अशत्य क्यों बोलूँ।

कविराज : सब ईश्वर की कृपा है भट्टाचार्य ! अपने तो कोई बाल-बच्चा नहीं है।

भट्टाचार्य : अरे ! यह क्या बात है ! कोई गोलमोल तो नहीं !

[उठ कर कविराज की नाड़ी देखना चाहते हैं। कविराज लोक-लाज के डर से दायें-बायें झाँकने लगते हैं।] डरो नहीं, हाँ हाँ कोई नहीं देखेगा। अरे भाई, साहित्य से भी तो नाड़ी देखा जाता है। कालिदास क्या था ! 'अपि गावा रोदित्यपि च विदलेद् वज्रहृदयम् !' ओ बाबा''''अशत्य कह कह गया। भवभूति का सूक्त है ! अपना भी सब गोल-माल हो गया कविराज !

कविराज : बन्धु ! थोड़ा धीरे-धीरे बोलो ! कारण यह है कि''''।

भट्टाचार्य : कोई कारण हो बाबा ! अपने शे तो धीरे नहीं बोला जाता ! कविराज तुम से मिल कर हृदय इमोशनल हो गया है।

कविराज : हाँ हाँ ! मैं ने यूँ ही कहा था !

भट्टाचार्य : ओह, नाड़ी तो चल रही है। भाई इस में लज्जा की क्या बात !

कविराज : ज़रा धीरे बोलो। तुम्हें कष्ट हो रहा होगा !

भट्टाचार्य : अरे जब धीरे स्त्री लोग नहीं बोलता, तो पुरुष हो कर हम क्यों—[नाड़ी देखते हैं।] नाड़ी तो ठीक ही चल रही है।

कविराज : परन्तु नारी''''।

[सहसा भीतर से देविमाँ प्रविष्ट होती हैं—चुपचाप, फिर हँसती हुई। उन्हें देखते ही भट्टाचार्य बेतरह घबड़ा जाते हैं।]

भट्टाचार्य : ओ माँ····ओ माँ····[कविराज के पास भागते हैं।] कविराज ! कविराज !!

कविराज : घबड़ाओ नहीं बन्धु ! यह मेरी धर्मपत्नी हैं। देवि, यह मेरे गुरुभाई हैं के० सी० भट्टाचार्य !

भट्टाचार्य : नेई नेई ·· माँ, हम बैंक में कलर्क हैं ··· क्लर्क ! ओ माँ, चण्डी, दुर्गा ! माँ आमी तुमार····! ओ माँ !

देविमाँ : [सहसा फूट कर हँसती है।] धत्तेरे की !

कविराज : भाभी बोलो, भाभी !

भट्टाचार्य : [विनय से] नमस्कार भाभीजी।

[उत्तर में देविमाँ भट्टाचार्य के बिलकुल पास चली जाती हैं। भट्टाचार्य घबड़ा जाते हैं।]

भट्टाचार्य : नेई नेई ! तुमी आमार माँ ! ओ माँ [झुक कर चरण स्पर्श करना चाहते हैं।] ओ माँ !

देविमाँ : धत्तेरे की !

कविराज : भट्टाचार्य ! तुम देवि को भाभी कहो न भाभी। माँ क्यों कहने लगे ?

भट्टाचार्य : [डरे हुए] नेईं नेईं, हम सब को माँ बोलता है, ओ माँ ऐसे न देखो माँ मुझे। मैं आप का शिशु हूँ, शिशु।

[सुमिरन घबड़ाया हुआ आता है।]

देविमाँ : आप क्या खाते हैं ? धत्तेरे की !

भट्टाचार्य : कुछ नहीं, माँ, कुछ नहीं।

कविराज : सुमिरन ! कुशल नहीं।

भट्टाचार्य : हमारा ? ओ माँ, नेई । नेईं ।

सुमिरन : हाय, गजब होइ गवा ! अब का करी ! सुनो माँजी !

देविमाँ : आप गुरुभाई हैं ?

भट्टाचार्य : नहीं माँ, हाँ....हाँ । नहीं, नहीं, हाँ....हाँ....हाँ !

सुमिरन : माँजी, चलिए मेला देखने चलेंगे ! झम्मक झम्मक....!

देविमाँ : मेरी नाड़ी देखो ! धत् तेरे की । मेरी नाड़ी देखो । साड़ी नहीं नाड़ी ! ही ही ही ही क्या करता ?

[भट्टाचार्य भयभीत नाड़ी देखते हैं ।]

भट्टाचार्य : शब ठीक है माँजी, शब ठीक है । ओ माँ ।

कविराज : सुमिरन ! क्या खड़ा-खड़ा मुख देख रहा है ?

देविमाँ : मैं सुन्दर हूँ न !

भट्टाचार्य : बहुत....बहुत....आश्चर्ज ।

[सुमिरन भीतर भागता है और एक मुँह का बाजा ला कर देविमाँ को देता है]

देविमाँ : तुम क्या देखता ?

सुमिरन : लेव बाजा बजाओ माँजी....पूं पूं पूं पूं !

[देविमाँ बाजा बजाती हैं, और गली के दरवाज़े की ओर बढ़ती हैं ।]

सुमिरन : हाँ हाँ, उधर नहीं उधर नहीं....यहर आइए यहर....!

[देविमाँ खड़ी बाजा बजाती हैं, सुमिरन उन्हें अन्दर ले जाने के लिए हाथ जोड़ रहा है ।]

देविमाँ : [सहसा बाजा रख कर स्त्री-सुलभ ढंग से सिर ढँकते हुए ।] नमस्ते, बैठिये !

[कविराज आँख मूँदे हाथ जोड़े ईश्वर की वन्दना करने लगते हैं ।]

कविराज : [प्रसन्नता से] देवि, यह मेरे दोस्त हैं, श्री के० सी० भट्टाचार्य !

देविमाँ : नमस्ते ! सुमिरन जलपान लाओ ! चलो अन्दर, क्षमा कीजिएगा····मैं अभी आयी ।

भट्टाचार्य : हाय····हम कोई श्वप्न देख रहा है क्या ? ओ बाबा !

[सुमिरन के साथ देविमाँ का अन्दर प्रस्थान, भट्टाचार्य और भी हतप्रभ हो जाते हैं ।]

कविराज : ईश्वर सब कुशल करते हैं ।

भट्टाचार्य : अरे बाबा ! पंखा लाओ पंखा ! एक लोटा शीतल जल ! ओ माँ ! ओ माँ !

[कविराज स्वयं दौड़ कर भीतर से पानी लाते हैं ।]

कविराज : बन्धु ! जल खाओ जल । मुँह खोलो !

[पानी पी कर भट्टाचार्य कुछ स्वस्थ होते हैं ।]

भट्टाचार्य : यह क्या है कविराज ! तुम ने मुझे आते ही क्यों नेइं बता दिया । [रुक कर] अब समझा, अब समझा, तुम्हारा दोष नहीं ! तुम तभी धीरे-धीरे बोलने के लिए मुझ से कह रहे थे । अब शमझा ।····हाय, गिन्नी तो शुन्दर बहुत है···पर माजरा क्या है ? अब शर्माता है ?

कविराज : मित्र, देख लो मेरा जीवन ! मेरी स्त्री का मस्तिष्क किंचित्···· । पर अब तो ठीक है, ठीक हो जायेगा ।

भट्टाचार्य : हाँ····हाँ····हाँ ! समझ गया····नाम न लो बाबा, सब समझ गया !

कविराज : पागल थीं यह ! मैं ने अपनी दवाइयों से इन्हें इतना ठीक किया। अब तो मस्तिष्क विकार थोड़ा ही रह गया है।

भट्टाचार्य : क्या बकते हो तुम कविराज ! देविमाँ अभी····।

कविराज : हाँ-हाँ, बाजा बजाते-बजाते अभी मस्तिष्क बिलकुल ठीक हो गया था। ऐसा ही अब होने लगा है।

भट्टाचार्य : ओ माँ ? ईश्वर करे यह अब पूर्ण स्वस्थ हो जायें। यह हुआ कब से ? बोलो न, तुम तो शर्माता है !

कविराज : मेरे गृहस्थ-आश्रम में प्रवेश करते ही।

भट्टाचार्य : ओ बाबा शरल हिन्दी बोलो····झूठ छिपाने के लिए तू शख्त हिन्दी बोलता है, हमें पता है ! हाँ तो विवाह के समय देविमाँ ठीक थीं ?

कविराज : मुझे पता नहीं ! लोग कहते हैं तब ठीक थीं यह। बन्धुवर, मेरा विवाह बचपन ही में हो गया था—जब मैं सात वर्ष का था। उस के बाद पिताजी ने मुझे गुरुकुल में भेज दिया, और गुरुकुल के बाद जैसा कि आप को पता ही है !

भट्टाचार्य : [बीच ही में] नेहीं बाबा, हम को कुछ पता नेहीं, न बाबा ! हम कुछ नेईं जानता ! हम चक्कर में नेईं पड़ना चाहता !

कविराज : हाँ गुरुकुल के बाद मैं आश्रम में चला आया, व्याकरण, न्याय एवं आयुर्वेद में आचार्य पद प्राप्त करने के बाद जब मैं गृहस्थ आश्रम में आया, तो मुझे यह धर्मपत्नी मिलीं।

तभी से मैं अपने सम्पूर्ण तन-मन-धन से इन्हीं के उपचार में लगा हूँ। ईश्वर ने मुझे सफलता दी।

भट्टाचार्य : सुनो, सुनो, सुनो, बहुत तेज मत बोलो, हम को थोड़ा समझने दो। गृहस्थ आश्रम में आते-आते देविमाँ पूर्ण पागल? तुम ने अपनी ओषधियों से इतना स्वस्थ किया?

कविराज : हाँ।

भट्टाचार्य : सुनो बाबा, तुम ने सुन्दर होने की कोई औषधि खोज निकाली है? तू इधर-उधर क्या देख रहा है? अउर झूठ बोलने के चक्कर में है क्या?

कविराज : धीरे-धीरे बोलो प्यारे!

भट्टाचार्य : [निःशब्द बोलते हैं—इशारे से]

कविराज : हाँ, मैं ने 'सुन्दर रस' बनाया है।

भट्टाचार्य : कितना लोग को सुन्दर बनाया है?

कविराज : प्रथम अपनी पत्नी को ही, क्योंकि मैं इन का प्रथम दर्शन कर के किंकर्तव्यविमूढ़ हो गया।

भट्टाचार्य : अयँ····कि····कि ···किंकर्तव्यविमूढ़ क्या?

कविराज : मतलब यह कि ···।

भट्टाचार्य : [बीच ही में] अरे बाबा हम बोल दिया, आश्रम वाली भाषा अब मुझ से नेइँ चलेगी। पहिले हमारा बात सुनो, हम ओ सब लाइन छोड़ दिया। पहिले हम अध्यापक बना, किन्तु ओ काम में हमारा माथा नेइँ लगा। फिर वैद्य बना, परन्तु वैद्यकी में एक को उलटा भस्म दे दिया, राम नाम सत्य हो गया। तब से हम एक बैंक में क्लर्क बाबू है। हम को बहुत अच्छा है, काज करता है और सोता

भी है। [रुक कर] हाँ तो सुनो, देविमाँ को अपनी दवा से तुम ने इतना सुन्दर बनाया ?

कविराज : हाँ, पहला प्रयोग मैं ने इन्हीं पर किया। साँवला रंग था इन का, मुँह पर चेचक के दाग़ थे, बड़ा सा मुख, उस में छोटी सी नाक और छोटी-छोटी आँखें ! मोटे होठ, बड़े-बड़े दाँत, मुख खुला हुआ।

भट्टाचार्य : [आश्चर्यचकित] अरे बाबा, वैसे से ऐसा हो गया। धन्य है तू ! [दौड़ कर चरण छूना चाहते हैं, कविराज भागते हैं।] खोखा चरण स्पर्श करेगा। हम मान गया, धन्य है तूमरा आयुर्वेद ! धन्य तूमरा साधना।

[इसी बीच भीतर से देविमाँ आ कर खड़ी हो जाती हैं, और दोनों मित्रों की गति देख कर मुसकराती हैं।]

भट्टाचार्य : [देविमाँ को देखते ही सब कुछ भूल जाते हैं।] देविमाँ !

कविराज : तुम भाभी कहो न बन्धु ! अब कोई डर नहीं है।

भट्टाचार्य : नहीं बाबा, सियाराम-सियाराम ! [एकाग्र दृष्टि से देवि को मन्त्र-मुग्ध हो कर देखते रहते हैं।] देविमाँ, आप का चरण-स्पर्श करूँगा। आप जैसा भाग्यवान् हम नेई देखा, आप का पति साक्षात् भगवान् हैं। अपनी प्रकृति तो ओई पुरुष !

[देविमाँ लजा कर भीतर भाग जाती हैं।]

भट्टाचार्य : तूमरा माफ़िक सत्य पुरुष हम नेइं देखा। तुम ने पुरुष जाति का नाक रखा, अन्यथा न्याय, व्याकरण और आयु-

वेंदाचार्य होने के उपरान्त पागल और असुन्दर पत्नी को कौन रखता है ? धन्य है !

कविराज : सब ईश्वर की कृपा है !

भट्टाचार्य : [आँख मूँद कर] देविमाँ, देविमाँ ! देविमाँ तूमि धन्य ! तूमि धन्य !

[हाथ जोड़े तथा आँख मूँदे आसन पर बैठ जाते हैं, और क्षणों में ही जैसे सो जाते हैं, भीतर से सुमिरन जलपान लिये आता है, संग में देविमाँ भी आती हैं ।]

देविमाँ : कृपया जलपान कर लीजिए । इन्हें जगाइए न !

कविराज : भट्टाचार्य, बन्धु भट्टाचार्य ! देवि तुम्हारे लिए जलपान ले आयी हैं ।

भट्टाचार्य : छेड़ो नहीं, हम चिन्ता कर रहा है—गृहस्थ-आश्रम में आ कर स्त्री पागल क्यों हो जाती हैं····?

कविराज : भट्टाचार्य !

भट्टाचार्य : [आँख खोलते ही] ओ देविमाँ ! लाइए····ला····इ····ए, हम थोड़ा सो गया था, कुछ थक गया है ।

देविमाँ : जलपान कीजिए । आते समय रास्ते में कुछ कष्ट हुआ है क्या ?

भट्टाचार्य : नेईं-नेईं कुछ नेईं । कुछ नेईं, आप कष्ट मत कीजिए, घर में जा कर आराम कीजिए, हम जलपान कर लेगा !

देविमाँ : लजाते हैं क्या ?

कविराज : ठीक है, ठीक है भट्टाचार्य ! [संकेत से कुछ न बोलने का आग्रह] सुमिरन, सब ठीक है !

[भट्टाचार्य जलपान समाप्त करते हैं।]

देविमाँ : और लीजिए, देखिए संकोच मत कीजिए। थोड़ा सा और''' थोड़ा! [डर के मारे खाना पड़ता है।]

कविराज : [पहले संकेत से] देवि का बनाया जलपान है। भाग्य देखो। ईश्वर तू कृपालु है। दयानिधि है तू।

भट्टाचार्य : [मुँह बुरी तरह से भरा है] बहुत अच्छा जलपान है, जितनी सुन्दर, आप हैं''''।

[भट्टाचार्य की दृष्टि कविराज से मिलती है। कविराज हाथ जोड़े हुए भट्टाचार्य से अधिक न बोलने का संकेत करते हैं।]

कविराज : भट्टाचार्य [न बोलने का संकेत]

देविमाँ : यह जगह तो बिलकुल अच्छी नहीं है। इधर सड़क उधर गली। बहुत पिछड़ी और पुरानी जिन्दगी है यहाँ की। देखिए न, मुझे यहाँ कुछ नहीं अच्छा लगता!

कविराज : सुमिरन! [संकेत से घर में ले जाने के लिए आग्रह] भट्टाचार्य और सब कुशल है न, घर-गृहस्थी तो सब ठीक है न? सब आनन्द मंगल!

देविमाँ : मैं यहाँ रहना बिलकुल नहीं पसन्द करती।

कविराज : [अति स्नेह से] अब तुम भट्टाचार्य के लिए भोजन की तैयारी करोगी न?

भट्टाचार्य : नेईं, नेईं, अब हम जायेगा! जलखाई बहुत हुआ!

[कविराज चुप रहने का संकेत करते रहते हैं।]

देविमाँ : अच्छा आज्ञा दीजिए! तब तक आप विश्राम कीजिए!

मैं आप के लिए भोजन बनाती हूँ। धन्यवाद! क्षमा कीजिएगा…।

कविराज : हे प्रभो आनन्ददाता!

[देविमाँ का प्रस्थान]

भट्टाचार्य : अहा हा! कौन कहता है कि देविमाँ किंचित्…।

कविराज : हाँ हाँ, अब कुछ ठीक हैं। पर कभी-कभी थोड़ा सा उस का दौड़ा हो जाता है।

भट्टाचार्य : हाँ, कविराज जरा सुनो तो, इस सम्बन्ध में तुम कभी अपने गुरु स्वामीजी से नेहीं मिला?

कविराज : गुरु महाराज अभी जीवित हैं क्या?

भट्टाचार्य : अरे तुम को पोता नेहीं? स्वामीजी जीवत हैं अभी। वैराग्य आश्रम में हैं। अभी कुछ दिन हुआ हम उन का दर्शन मथुरा में किया है।

कविराज : सच भट्टाचार्य!

भट्टाचार्य : हाँ! हाँ! परन्तु छुप कर दर्शन किया। सामने जाने का हिम्मत नहीं हुआ। उन का शिष्य हो कर बैंक में क्लर्क, हम क्या उत्तर देता उन को?

कविराज : सच?

भट्टाचार्य : अउर किया झूठ!

कविराज : गुरुजी का मुझे दर्शन कराओ भट्टाचार्य! अभी चलो तुम! हम लोग यहाँ से सीधे मथुरा चलें। अभी…अभी…चलो बन्धु! उन की औषधि क्या, उन के दर्शन-मात्र से देवि पूर्ण स्वस्थ हो जायेंगी।

भट्टाचार्य : हम तैयार हैं, तुम्हारी दशा और चिन्ता हम नेईं देखने सकेगा।

कविराज : विश्वास मानो, सुन्दर रस की सारी कमाई मैं ने देवि के स्वास्थ्य पर लगा दी। घर पर दो शिष्यों को पढ़ाता हूँ। ऐसे मकान में पिछले तेरह वर्षों से जीवन बिता रहा हूँ। मेरी इतनी सुन्दर पत्नी····।

भट्टाचार्य : घबड़ाओ नहीं। अपने गुरुजी कोई एक खुराक देगा····नेईं तो कोई जड़ी-बूटी पिला देगा, बस तुरत सब ठीक! की बोल्लाम् की ठीक तो तुम्हीं ने कर लिया है। हम को तो नेईं लगता कि देवि माँ पर उस का 'फिट' आ जाता है। ऐसा माफिक 'फिट' तो सभी औरत पर आ जाता है।

कविराज : देवि को तैयार करता हूँ, हम सब लोग आज ही की गाड़ी से मथुरा चलेंगे।

भट्टाचार्य : हम तो बोल दिया! तूमरा संग चलेगा। 'ए फ्रेन्ड इन नीड ए फ्रेन्ड इनडीड।' हमें तुम क्षमा करना कविराज, सब संस्कृत भूल गया। 'क्रेडिट····डेबिट····क्रेडिट····डेबिट····चैक बुक····कैश बुक····लेजर····लेजर [रुक कर] नो प्लेजर नो प्लेजर!'

[इसी बीच कविराज अन्दर चले जाते हैं। भट्टाचार्यजी उसी भाँति चिन्तामग्न हैं।]

भट्टाचार्य : तुम अन्दर चला गया कविराज! एक गिलास जल लाना, जल, शीतल जल। ओ सुमिरन, एक गिलास जल!··· परन्तु ज़रा सँभाल के, उन से आँख बचा के हाँ····ओई राम शोई राम, ओई राम शोई राम!

[सुमिरन जल दे जाता है । कविराज आते हैं ।]

कविराज : [बहुत ही प्रसन्न] सब ठीक है, हम लोग आज ही चलेंगे ! तुम कितने अच्छे हो !

भट्टाचार्य : छोड़ो-छोड़ो, हम इतना सुन्दर थोड़े ही हैं । [रुक कर] हम को कुछ देगा ? देगा कि नेईं ?

कविराज : जो माँगो !

भट्टाचार्य : माँगूँ ! माँग लूँ ? कहीं बहाना तो नेईं बनाये देगा ?

कविराज : कभी नहीं, कभी नहीं ।

भट्टाचार्य : दो ख़ुराक सुन्दर रस ।

कविराज : ओ हो ! तुम अभी कितना सुन्दर बनोगे भट्टाचार्य ? तुम जितना चाहो उतना सुन्दर रस ले जाओ । घड़ों भरवा दूँ तुम्हारे लिए !

भट्टाचार्य : नहीं बाबा हम 'ब्लैक' नहीं करता । हमें तो सिर्फ़ दो ख़ुराक सुन्दर रस चाहिए । एक अपने लिए और एक....उन के लिए....समझ गया हाँ, एक ख़ुराक गिन्नी के लिए ।

[दरवाज़े से दोनों शिष्यों का प्रवेश]

शक्तिदेव : गुरुजी ! गुरुजी !

जैनाथ : गुरुजी !

कविराज : क्या है ? कैसे आ गये तुम लोग ?

जैनाथ : गुरुजी, शक्तिदेव कहता है कि आप का 'सुन्दर रस' केवल स्त्रियों को ही सुन्दर बनाता है ।

कविराज : नहीं, सब को सुन्दर बनाता है....सब को ! पर इस बेवक्त तुम लोग कहाँ आ टपके ?

शक्तिदेव : इसी की वजह से मुझे टपकना पड़ा !

जैनाथ : नहीं गुरुजी यह खुद आया है !

कविराज : चले जाओ तुम लोग यहाँ से !

शक्तिदेव : [कुछ क्षणों के बाद] तो जायें गुरुजी हम लोग ?

कविराज : और क्या मेरी जान लोगे ?

[भीतर से सहसा अच्छे वस्त्र पहने हुए तथा पति के लिए अच्छे वस्त्र के साथ देविमाँ का प्रवेश]

शक्तिदेव : हाय, कितनी सुन्दर !

कविराज : लो—देवि तैयार हो गयीं ! चलो पहले भोजन कर लें, फिर कपड़े बदल लूँगा ! तुम लोग जाते क्यों नहीं ?

देविमाँ : नहीं, अभी पहनिए ! क्या नंगे बदन रहते हैं ?

भट्टाचार्य : देविमाँ, गुरुकुल में तो यह बिलकुल नंगे रहते थे । सिर पर खाली चुटिया पहने थे !

शक्तिदेव : बड़ा 'ह्यूमर' है आप में !

कविराज : तुम लोग सीधे से जाते हो कि नहीं ?

शक्तिदेव : ज़रूर ज़रूर !.... जैनाथ पूछ ले न !

जैनाथ : तू खुद पूछ न !

शक्तिदेव : देविमाँ ! देविमाँ !

जैनाथ : कहीं जा रही हैं क्या ?

शक्तिदेव : सुनिए गुरुजी, कहाँ जा रहे हैं आप लोग ?

कविराज : [क्रोध में] टोक दिया न ! चले जाओ यहाँ से ! निकल जाओ !

[शिष्य भागते हैं]

देविमाँ : [उसी भाँति] चले जाओ। गेट आउट ! चले जाओ !
चले, एकवचन...चले....एकवचन... नहीं, बहुवचन !

कविराज : ओह ! फिर वही दौड़ा पड़ गया ! देवि ! देवि ! शान्त—
•शान्त !

देविमाँ : धत्तेरे की। [हाथ से सब वस्त्र फेंक कर भट्टाचार्य की ओर बढ़ती हुई] आप की तारीफ़ ? आप कौन साहब हैं ?

कविराज : अन्दर, अन्दर, अन्दर !

भट्टाचाय : ओ माँ ! माँ कुछ नहीं। हमें माफ़ी दो माँ !

कविराज : सुमिरन : दौड़ो जल्दी !

देविमाँ : आप इस तरह मुझे क्यों घूर रहे हैं ? बत्तमीज़ ! उल्लू !
पाजी !

भट्टाचार्य : माँ हम आँख बन्द कर लेता है। हम इधर देखेगा।
[डरे हुए दूसरी ओर मुड़ कर खड़े हो जाते हैं ! सुमिरन दौड़ा आता है।]

कविराज : सुमिरन, सँभालो ! दवा नहीं पिलायी थी क्या ?

सुमिरन : पिलायी थी महाराज ! भोजन बनाने से गरमी लग गयी है।

कविराज : देवि ! देवि ! आओ मेरे संग आओ ! चलो भीतर चलें !

सुमिरन : माँजी आइए उधर ! चलिए स्नान कर लीजिए !

देविमाँ : [मुख पर हाथ रख कर बाजे की भाँति बजा देती है।]
एक...दो...तीन !

कविराज : सुमिरन, बाजा ले आओ।

[सुमिरन भीतर भागता है ।]

देविमाँ : [भट्टाचार्य की ओर जाती हैं] आप कौन हैं, आप यहाँ क्यों आये ? [भट्टाचार्य दूसरी ओर मुख मोड़ लेते हैं ।] मुझे देखिए ! [इसी समय सुमिरन आता है—बाजा देविमाँ सहर्ष ले लेती हैं ! और भट्टाचार्य के मुख के पास बजाने लगती हैं ।]

भट्टाचार्य : ओ माँ ! हम ईहाँ कोभी नेईं आयेगा ।

सुमिरन : बस बस, ज्यादा बोलो नाहीं बंगाली बाबू !

भट्टाचार्य : अच्छा''''अच्छा इन्हें उधर !

कविराज : हे ईश्वर ! हे ईश्वर ! हे गुरु महाराज, स्वामीजी ! मेरे परम आचार्य !

[बाजा बजाते-बजाते सहसा देविमाँ को सुधि हो जाती है । और वह प्रकृतिस्थ हो अपने सहज भाव में आ कर लज्जा से चुप खड़ी रहती हैं ।]

कविराज : [प्रसन्नता से] भट्टाचार्य ! भट्टाचार्य ! अब इधर देखो ! देखो अब इधर !

भट्टाचार्य : [आँख मूँदे हुए पलटते हैं] ओ माँ ! ओ माँ !

कविराज : आँख खोलो भट्टाचार्य ! खोलो अब ।

[आँख खोलते ही देविमाँ को देख कर पुन: डर से आँख मूँद लेते हैं । पुन: आँख खोल कर दम भर साँस लेने लगते हैं । देविमाँ सिर झुकाये सलज्ज खड़ी हैं ।]

परदा

दूसरा अंक

[दो महीने बाद, परदा फिर उसी स्थान पर उठता है। पर कमरे का सारा रूप बदल गया है। दीवार पर देविमाँ का चित्र लगा है। बैठने के लिए, बिलकुल नये ढंग की हलकी ख़ूबसूरत तीन कुरसियाँ, बीच में छोटा गोल टेबुल, जिस पर कवर लगा है। लैम्प, फ्लावर बेस, जिस में ताज़े फूल लगे हैं। दूसरी ओर दीवान, जिस पर कवर पड़ा है। बीच में खुली हुई छोटी सी आलमारी बीच के ख़ानों में किताबें लगी हैं—ऊपर बच्चों के कुछ खिलौने रखे हैं—बीच में कपड़े की एक गुड़िया सजी रखी है। दरवाज़ों पर मेल खाते हुए सुन्दर परदे झूल रहे हैं। सन्ध्या का समय है।

गली के दरवाज़े से दोनों शिष्य प्रवेश करते हैं। पूर्णत: परिवर्तित कमरे को देख कर वे डर जाते हैं। आश्चर्य एवं कुतूहल से फिर एक-एक वस्तु देखने लगते हैं।]

शक्तिदेव : [कुछ देर बाद] जैनाथ, यह सब क्या हो गया ?—वही कमरा है न ?

जैनाथ : हाँ वही जगह है, धीरे-धीरे बोल !

शक्तिदेव : [आसन पर बैठ कर] अहा हा ! परिवर्तन ही सृष्टि का नियम है। [सहसा देविमाँ का चित्र देख कर दौड़ता हुआ।] आँ····देविमाँ !

[दोनों आश्चर्य चकित चित्र देखते हैं।]

जैनाथ : लगता है देविमाँ बिलकुल ठीक हो गयीं। उन्हीं के हाथों यह कमरा सजाया गया है।

शक्तिदेव : अहा ! हा ! क्यों न हो ! पता है तुझे, देविमाँ अँगरेज़ी पढ़ी हुई हैं।

जैनाथ : पता नहीं, अब सुन्दर रस हमें देंगी या नहीं। इसी लिए गुरुजी ने हमें डेढ़ महीने की छुट्टी दे दी थी। बेकार ही में हमें घर जाना पड़ा। इस बीच.... ।

[शक्तिदेव आलमारी पर सब कुछ निहारता हुआ, सहसा गुड़िया उठाता है—उस में से आवाज़ सुन कर डर से चीख़ पड़ता है और उसे फेंक कर जैनाथ से चिपट जाता है।]

जैनाथ : जान है उस में क्या ? नहीं-नहीं, मैं देखता हूँ। निर्जीव गुड़िया है यह। छोड़, मैं देखता हूँ। [बड़े साहस और हिम्मत से गुड़िया उठाता है] देख ! गुड़िया तो है। डरपोक कहीं के। [हिलाते-डुलाते समय गुड़िया से वही स्वर निकलता है, जैनाथ सहसा उसी भाँति डर से चीख़ पड़ता है।]

[दोनों शिष्य एक दूसरे को मज़बूती से पकड़े खड़े हैं। भीतर से बीना का प्रवेश।]

बीना : [दोनों शिष्यों को उस भाँति देखते हुए] कौन हो तुम लोग ? भागते कहाँ हो ? पकड़ लो....पकड़ लो....चोर.... चोर ! [शिष्यों के पीछे दौड़ता है। भीतर से दौड़ा हुआ सुमिरन आता है। दोनों शिष्य गली में भाग गये हैं। सुमिरन गली के दरवाज़े पर रुक जाता है।]

सुमिरन : [बुलाता है] आओ....आओ....आ जाओ बाबू लोग ! [हँसता है]

बीना : कौन हैं वे लोग ? बोलते क्यों नहीं ?

सुमिरन : महाराजजी के शिष्य हैं—शक्तिदेव बाबू और जैनाथ बाबू। [हँस पड़ता है] आप ने क्या समझा कि चोर घुस आये हैं ? [दोनों शिष्य दरवाज़े से झाँकते हैं] आ जाओ....आ जाओ बाबू लोग। डरो नहीं यह बीबीजी हैं....देविमाँ की छोटी बहन।

[दोनों शिष्य हिम्मत से आते हैं, और बड़े विनय से नमस्ते करते हैं]

सुमिरन : बीबीजी आप लोगन कैं देख कै डर गयीं। [हँसता है] चोर....चोर ! [बीना को देख कर हँसना बन्द कर लेता है। बीना सब की बेवक़ूफ़ी से अप्रसन्न खड़ी है।]

बीना : अरे ! मैं क्यों डर गयी ? [सब सामान पर दृष्टि दौड़ा कर] देखो न इन लोगों ने सारा सामान उलट-पुलट कर दिया है। [गुड़िया उठाती हुई] ओहो, इस की दशा देखो। यह कहाँ के जंगली लोग हैं !

[उठाते ही गुड़िया फिर आवाज़ करती है, दोनों शिष्य डर जाते हैं। सुमिरन हँस रहा है।]

सुमिरन : ये लोग गुरुजी के शिष्य हैं—पढ़ते हैं यहीं !

बीना : यह लोग पढ़ते हैं ? कुछ अकल भी है ? गँवार कहीं के ! सारा उलट-पुलट दिया। [रुक कर] इन से कहो कि ये लोग जायें यहाँ से ! खड़े क्यों हैं ?

[बीना सब चीज़ें ठीक करती है। गुड़िया के कपड़े उतर से गये हैं, उसे पुनः क़रीने से पहनाने में व्यस्त हो जाती है।]

सुमिरन : ये लोग पढ़ते हैं यहाँ।

बीना : पढ़ते हैं ?

शक्तिदेव : और नहीं तो क्या ?

बीना : बोलने की तमीज नहीं ?

जैनाथ : देविमाँ की बीमारी के सिलसिले में गुरुजी ने हमें डेढ़ महीने की छुट्टी दी थी। हम गुरुजी के बहुत प्रिय शिष्य हैं, हाँ !

सुमिरन : ठीक कहथिन ई लोग !

शक्तिदेव : और नहीं तो क्या ? हमारे गुरुजी कहाँ हैं ?

जैनाथ : जल्दी बताओ !

सुमिरन : सुनो सुनो। देविमाँ अच्छी ह्वै गयीं। देखो न, घर कैसा बदल गवा ! देविमाँ को अब देखोगे तो....। बिलकुल बदल गयीं। सुनो, मुझे बहुत मानती हैं। देखो न मेरे कपड़े। मैं अब गाँव की बोली नहीं बोलता। बुरा मानती हैं !

[गुड़िया अभी जल्दी में नहीं ठीक हो पा रही है।]

बीना : क्या बक-बक-बक कर रहा है। जाओ गली में बातें करो।

शक्तिदेव : आओ सुमिरन !

सुमिरन : [कुछ क्षण रुक कर] देविमाँ अभी आ रही होंगी। बाज़ार गयी हुई हैं। गृहस्थी का सामान लाने। महाराज-जी आज आवै वाले हैं !

शक्तिदेव : गुरुजी नहीं हैं ?

जैनाथ : कहाँ गये हैं ?

बीना : नहीं चुप होगे तुम लोग ? आने दो जीजी को ! सुमिरन, मैं तुम्हारी भी शिकायत करूँगी ! गुड़िया तोड़ डाली.... ।

सुमिरन : बीबीजी ! बहुत दिनों बाद आये हैं ये लोग । देविमाँ इन लोगों को बहुत मानती हैं ।

शक्तिदेव : ई कौन हैं ?

जैनाथ : बड़ी गुस्से वाली हैं !

शक्तिदेव : चुप बे, यह गुस्सा नहीं प्यार है प्यार । फिलिम में बिलकुल ऐसे ही होता है । हिरोइन पहले इसी तरह.... !

बीना : क्या कहा ?

जैनाथ : हाँ, हाँ, हम गुरुजी के शिष्य हैं !

शक्तिदेव : और नहीं तो क्या ?

बीना : यहीं पढ़ते-लिखते हैं ये लोग ? आप लोग क्या पढ़ते हैं ?

[गुड़िया को यथास्थान रखती है ।]

जैनाथ : तुम्हीं बता दो न ।

शक्तिदेव : [बताने की मुद्रा बनाता है ।] सुमिरन ! बताया नहीं गुरुजी कहाँ गये हैं ?

[बीना परदे ठीक करती है ।]

सुमिरन : हाँ, कविराजजी मथुराजी गये हैं, अपने गुरुजी के पैर छूने । आज बीस दिन ह्वै गये । देविमाँ ने जवाबी तार दिया था, जवाब आया है, कविराजजी आज आयेंगे ।

बीना : नहीं चुप होगे तुम। [जाती हुई] लो जी भर चीखो-चिल्लाओ। पता नहीं जीजी कैसे रहती थीं यहाँ ?

[प्रस्थान]

शक्तिदेव : चली गयीं ?

जैनाथ : सुमिरन, दरवाज़ा बन्द कर लो भइया !

सुमिरन : अरे राम ! सब दरवाज़ों पर परदा लग गया। [रुक कर] देविमाँ की छोटी बहन हैं, बी०ए० पास हैं। अभी इन की शादी नहीं हुई है।

शक्तिदेव : सच ! अब तक नहीं हुई है—अरे !

जैनाथ : देविमाँ की सगी बहन हैं ?

सुमिरन : बड़ी ख़ुशी मनायी गयी है यहाँ। मुझे इनाम-बख़्शीश मिला है।

[अपने कपड़े दिखाता है।]

शक्तिदेव : हाय हाय ! हमारा दुर्भाग्य ! हमारा दुर्भाग्य !

जैनाथ : अब क्या होगा शक्तिदेव ? हे भगवान् 'सुन्दर रस' !

[दोनों हाथ जोड़े विनय स्वर में।]

शक्तिदेव : बस एक ही ख़ुराक मुझे भी भगवान्। हम ग़रीब विद्यार्थियों पर दया करो भगवान् ! हम तेरी शरण हैं। [सहसा प्रार्थना स्वर में] 'शरण में आये हैं हम तुम्हारी !'

जैनाथ : 'दया करो हे दयालु भगवन् !'

[दरवाज़े से सहसा किसी की पुकार आती है।]

सुमिरन : बाबू लोग चुप रहिए, कोई पुकार रहा है। आप लोग बैठ जाइए।

शक्तिदेव : कहाँ बैठें ? हमारा आसन कहाँ है ?

जैनाथ : कैसे बैठें हम ?

सुमिरन : [दरवाज़े पर बढ़ कर] कौन साहब हैं ? आइए—आइए। [वकील साहब केदार बाबू का मुँह में सिगरेट दबाये हुए प्रवेश]

शक्तिदेव : हाँ हाँ हाँ ! यहाँ धूम्रपान नहीं। फेंकिए—फेंकिए !

जैनाथ : आप का परिचय ?

केदार : [सिगरेट बुझा कर फेंकते हुए] मेरा नाम केदार बाबू है—मैं यहाँ वकील हूँ।

सुमिरन : [सिगरेट का टुकड़ा उठाता हुआ एक बार ग़ुस्से से देखता है फिर एस्ट्रे में रख देता है।] यहाँ फेंक देते हैं ? पहले का जमाना गया बाबू साहब, हाँ नहीं तो का !

शक्तिदेव : और क्या ? देखते क्या हैं ?

[केदार बाबू एक कुरसी पर आराम से बैठ जाते हैं।]

सुमिरन : आप लोग भी बैठ जाइए न—डराइंग रूम है अब, हाँ !

[अन्दर जाता है—दोनों शिष्य डरते-डरते बहुत सँभल कर कुरसियों पर बैठते हैं। वकील साहब बदले हुए कमरे की सुन्दर सज्जा से चकित हैं।]

केदार : इस कमरे की तो पूरी शकल ही बदल गयी। क्यों, कविराज का यही घर है न ?

शक्तिदेव : हाँ जी, मेरे गुरुजी का ही यह कमरा है।

केदार : आप की तारीफ़ ?

शक्तिदेव : मेरा नाम श्रीशक्तिदेवप्रसाद पाण्डेजी है, और आप हैं श्रीजैनाथ त्रिपाठी !

जैनाथ : हम लोग कविराज के शिष्य हैं।

[केदार उठ कर पुनः कमरा देखते हैं।]

केदार : यह कमरा तो बहुत ही खूबसूरत हो गया। कविराजजी कहाँ हैं ?

शक्तिदेव : आप को नहीं मालूम ! कविराजजी की धर्मपत्नी, अर्थात् हमारी देविमाँ अब बिलकुल ठीक हो गयीं।

केदार : जिन का दिमाग़ खराब था ?

जैनाथ : हाँ थोड़ा सा।

शक्तिदेव : अब बिलकुल ठीक हो गयीं।

केदार : अच्छा, बड़ी ख़ुशी की बात है। तभी इस कमरे की हालत इतनी सुधर गयी—मैं कहूँ कि क्या हो गया। 'वेरी गुड, नो लाइफ़ विदाउट गुड वाइफ़।'

शक्तिदेव : क्या कहा आप ने ?

जैनाथ : शीतल जल चाहिए क्या ?

केदार : नहीं जी, मुझे कुछ नहीं चाहिए।

शक्तिदेव : बैठिए""बैठिए""आप उठ क्यों गये ?

जैनाथ : आप कुछ परेशान से लग रहे हैं !

[भीतर से सहसा बीना का प्रवेश। देखते ही दोनों शिष्य उठ कर एक किनारे खड़े हो जाते हैं और डरे-डरे बीना को देखते रहते हैं।]

बीना : कुरसी पर बैठने की तमीज़ नहीं ?

शक्तिदेव : क़मीज़ है मेरे पास—घर पर है।

बीना : बहरे हो क्या ? सुनाई भी नहीं देता। [केदार से] आप कौन साहब हैं ? तशरीफ़ रखिए।

[बीच-बीच में बीना ग़ुस्से से दोनों शिष्यों को देखती रहती है।]

केदार : आप''''आप !

बीना : जी हाँ, मैं देविमाँ की छोटी बहन हूँ।

केदार : [कुरसी पर बैठते हुए] आप बहन हैं। कविराजजी कहाँ हैं ?

बीना : बाहर गये हैं, मथुरा तक।

केदार : कब आयेंगे ?

बीना : आज आ रहे हैं।

केदार : आप सच छोटी बहन हैं देविमाँ की ?

बीना : जी हाँ, क्यों ?

केदार : [ग़ुस्से से उठ कर] कितने धोखे की बात है यह। कविराज ने अपनी देविजी को असली 'सुन्दर रस' पिला कर इतना ख़ूबसूरत बना लिया। और मुझे नक़ली 'सुन्दर रस' दिया। पूरे दो सौ इक्यावन रुपये लिये हैं मुझ से। मैं ने उस का सेवन किया, मुझे देखिए, मुझ में कोई फ़र्क़ नहीं आया—मैं वैसा का वैसा ही हूँ।

शक्तिदेव : ओय होय ! ऐसी बात''''!

जैनाथ : आप ने सुन्दर रस का ही सेवन किया ?

शक्तिदेव : पानी के साथ या चाय के साथ ?

केदार : जैसे कविराज ने कहा था !

शक्तिदेव : क्या ?

[पाकेट से आइना निकाल कर अपनेआप को देखने लगते हैं । दायें से बायें, नीचे से ऊपर । बीना ग़ुस्से से देखती हुई अन्दर चली जाती है ।]

जैनाथ : नहीं लाभ हुआ आप को ? आप ने सचमुच सुन्दर रस का सेवन किया था ?

शक्तिदेव : उस की सम्पूर्ण विधि और उपचार का पालन किया था ?

केदार : और नहीं तो क्या ? ठीक ढाई महीने तक अपने कमरे में पड़ा रहा । धूप, धुआँ और धूल को मैं ने देखा तक नहीं, छूने को कौन कहे । दूध, फल-फूल का सेवन, और सुबह-शाम चन्द्रोदय उपटन का लेपन । मेरी नयी-नयी वकालत खाक में मिल गयी ।

शक्तिदेव : सुमिरन ! शीतल जल पिलाओ !

[दोनों शिष्य केदार बाबू के आवेश से घबड़ा गये हैं ।]

केदार : जनाब, मेरे पास 'सुन्दर रस' खरीदने की पक्की रसीद है । मुझे इस दवा से क़तई फ़ायदा नहीं हुआ । मुक़दमा चलाऊँगा कविराज पर, हाँ !

[सुमिरन भीतर से जल लाता है ।]

शक्तिदेव : लीजिए वकील साहब, शीतल जल पीजिए ।

केदार : पानी रखो अपने गुरु के सिर पर ! मेरे भीतर तो आग लगी है । जिस लड़की से मेरा प्रेम है, उस से मेरी शादी

रुकी हुई है। मेरी सारी ज़िन्दगी खतरे में है। देखो इस कमरे को। देविजी जैसी खूबसूरत औरत के हाथ लगते ही यह कमरा कितना हसीन हो गया!

[कहते-कहते सुमिरन के हाथ से ले कर पूरा गिलास एक साँस में खाली कर देते हैं।]

जैनाथ : सुमिरन, और शीतल जल लाओ।

केदार : नहीं, मेरे पास इतनी फ़ुरसत नहीं! मैं जा रहा हूँ अब।

सुमिरन : रुकिए! रुकिए! महाराजजी आने वाले हैं।

शक्तिदेव : जी हाँ, बैठिए! कहिए तो आप के मनोरंजन के लिए मैं कुछ संगीत प्रस्तुत करूँ!

[गाना शुरू करता है।]

केदार : बन्द करो यह राग!

शक्तिदेव : अच्छा दूसरी चीज़ सुनाता हूँ।

केदार : नहीं; मैं केवल ऊषा के संगीत का पुजारी हूँ।

जैनाथ : अयँ ऊषा, यह ऊषा कौन है?

केदार : चुप रहो। खबरदार जो मेरी ऊषा का नाम लिया!

[सुमिरन मुँह दबाये भीतर जाता है।]

शक्तिदेव : माफ़ कीजिए। अब हम सब समझ गये।

[केदार बाबू काग़ज़ और पेन निकाल कर एक चिट्ठी लिखते हैं। दोनों शिष्य डरे से आपस में देखते रहते हैं।]

केदार : [चिट्ठी लिख कर जैनाथ को देते हुए।] कविराज के नाम मेरी यह चिट्ठी है। आते ही उन्हें दे दीजिएगा। मेरे

पास इतनी फ़ुरसत नहीं है। 'परसनल लेटर' है, आप लोग इसे पढ़िएगा नहीं !

जैनाथ : अच्छी बात है जी, बेफिकर रहिए।

शक्तिदेव : मतलब विश्वास रखिए।

[केदार बाबू का प्रस्थान। क्षण भर बाद दोनों शिष्य गली में मुड़-मुड़ कर देखते हैं।]

शक्तिदेव : गया, चला गया।

जैनाथ : नाम देखिए, केदार बाबू ! इन्हें सब बाबू कहें !

शक्तिदेव : हमारे गुरुजी की निन्दा करने आया था ! मारो तो····भाग गया। बदमाश····कहता है, 'सुन्दर रस' से लाभ नहीं हुआ।

जैनाथ : 'मुक़दमा चलाऊँगा····' बड़ा आया है····!

[भीतर से दौड़ा हुआ सुमिरन आता है।]

सुमिरन : क्या है बाबू लोग ! बहुत शोर मत कीजिए ! बीना बीबीजी बहुत नाराज़ ह्वै रही हैं ! मुझे बहुत डाँट रही हैं।

शक्तिदेव : वही जो आया था ! भाग गया बच के, वरना मैं गुरुजी के अपमान का सारा बदला····।

सुमिरन : अरे बाबू मुझे क्यों नहीं बताया ? पानी में जमालगोटा मिला दिये होता !

जैनाथ : सुन्दर होने चले थे ! क्रोधी ! अहंकारी !

शक्तिदेव : ऊषादेवी से आप का प्रेम चल रहा है ! आ हा हा ! हा !

सुमिरन : अँधियारी रात जैसी सूरत-शकल !

शक्तिदेव : चिट्ठी में क्या लिखा है ?

जैनाथ : पता नहीं ! मैं नहीं छूता भइया !

सुमिरन : अरे, देख न लो बाबू ! कोई उलटी-सीधी बात न लिख गया हो !

जैनाथ : देख लूँ तब ? नहीं, तुम देख लो शक्तिदेव !

शक्तिदेव : अच्छा, लाओ मैं ही देख लेता हूँ ! अच्छा सुमिरन, तुम्हीं देख लो ! अच्छा खोल ही दो !

सुमिरन : अच्छा चाक़ू ले आऊँ !

[सुमिरन अन्दर भागता है । शक्तिदेव और जैनाथ क्रमशः पत्र उठाते हैं, पर डर के मारे पत्र रख देते हैं । उसी क्षण पीछे के दरवाज़े से देविमाँ का प्रवेश । देविमाँ बिलकुल बदली हुई हैं—नवजीवन तथा उल्लास से भरी हुई । क़रीने से कपड़े पहने हुए हैं । दोनों शिष्य देखते ही देविमाँ का चरण-स्पर्श करते हैं ।]

देविमाँ : खुश रहो ! कब आये ?····बैठो····बैठो !

[दोनों शिष्य कभी अपनेआप को, कभी आसन को और कभी देविमाँ को देखते रहते हैं ।]

देविमाँ : अरे ! बैठते क्यों नहीं ! सुमिरन ! यहाँ चलो ! कमरा अच्छा लगा ? सुन्दर है न ?

शक्तिदेव : बहुत····बहुत अच्छा माँजी ।

जैनाथ : ईश्वर को बहुत-बहुत धन्यवाद । आप बिलकुल ठीक हो गयीं ।

शक्तिदेव : माँजी, हम को कुछ इनाम दीजिए। मैं नित्य हनुमान्‌जी से प्रार्थना करता था कि हमारी माँजी का स्वास्थ्य जल्दी ठीक हो जाये।

जैनाथ : हाँ माँजी। कृपा कीजिए हम पर। हम जीवन भर आप का गुण गायेंगे।

[भीतर से सुमिरन आता है। देविमाँ बाज़ार से सामान ले आयी हैं, उसे बताती हुई।]

देविमाँ : इस पैकेट को आलमारी में रखना, और इसे बीना को दे देना। कविराजजी आये कि नहीं ?

सुमिरन : अभी नहीं आये।

देविमाँ : [घड़ी देखती हुई।] गाड़ी तो आ गयी होगी, आ जाना चाहिए था उन्हें अब तक। तुम्हारे गुरुजी यह कमरा देखेंगे तो कितने प्रसन्न होंगे।

सुमिरन : [जाता हुआ] आ ही रहे होंगे माँजी।

देविमाँ : [स्नेह से] मेरी तबीयत क्या ठीक हुई कि घर से ग़ायब हो गये। मैं कैसी लग रही हूँ ? अच्छा....! मेरे ही हाथों से इतना सुन्दर हुआ है....। [रुक कर] अच्छा बोलो क्या चाहिए तुम्हें ? बैठो....बैठो ...अरे बैठते क्यों नहीं, यहाँ बैठो न !

शक्तिदेव : हमें शरम आती है।

जैनाथ : हमारी आदत नहीं है !

शक्तिदेव :
जैनाथ : } [नीचे बैठते हुए] यहीं ठीक है माँजी। बहुत अच्छा है।

देविमाँ : [उठा कर उन्हें दीवान पर बैठाती हैं] यह भी तो आसन ही है। कुरसी नहीं पसन्द है तो इसी पर बैठो।

शक्तिदेव : माँजी, बात यह है कि कोई आप की बहन आयी हैं, हमें डाँटती हैं, वह।

जैनाथ : चुप रह। तरीक़ा सिखाती हैं कि डाँटती हैं।

[देविमाँ स्नेह से हँसती हैं।]

देविमाँ : पता है, अच्छी होते ही मैं अपने पिता के यहाँ चली गयी थी—वहाँ सब मुझे देखते रह गये। 'सुन्दर रस' की ख़ूब चर्चा है। जो मुझे देखता है—वह 'सुन्दर रस' को पूछने लग जाता है।

शक्तिदेव : [पास आता है और पैरों में बैठ जाता है।] माँजी, थोड़ा सा 'सुन्दर रस'।

जैनाथ : [पास दौड़ कर] एक ख़ुराक इसे, और एक ख़ुराक मुझे। जीवन भर आप का गुण गायेंगे, माँजी।

[उसी समय भीतर से बीना आती हैं।]

शक्तिदेव : माँजी।

देविमाँ : बैठो ! बैठो !

[दोनों पुनः सगर्व दीवान पर बैठते हैं।]

देविमाँ : इन्हें जानती हो, आचार्यजी के शिष्य हैं।

बीना : शिष्य हैं ? पढ़ते-लिखते हैं ये लोग ? [रुक कर] मेरा तो यहाँ दम घुटने लगा !

देविमाँ : क्यों, क्या बात है ! अरे, चुप क्यों हो गयी ?

शक्तिदेव : हम से असन्तुष्ट हैं यह !

बीना : आप लोग कुछ देर के लिए बाहर चले जायें तो•••••!

शक्तिदेव : हाँ !•••••हाँ•••••। अवश्य•••••अवश्य !

[एक-एक कर के शक्तिदेव और जैनाथ का प्रस्थान। गली में से कभी-कभी परदा हटा कर देखते रहते हैं।]

देविमाँ : क्या बात है बीना ? तुम्हारे लिए बहुत सुन्दर कपड़े ले आयी हूँ—देखो ! अब यह कमरा कितना सुन्दर लगता है ! सुन्दर रस•••••।

बीना : सुन्दर रस !•••••सुन्दर रस ! सुन्दर रस के विज्ञापन के लिए अपना विज्ञापन करने लगीं ?

देविमाँ : बीना••••• !

बीना : कितना शोर मचता है यहाँ ! एक वकील साहब यहाँ आये थे; पागलों जैसे चीख रहे थे•••••वे सुन्दर नहीं हो सके। सुन्दर रस से उन्हें फ़ायदा नहीं हुआ। बेसिर-पैर की बातें कर के चले गये।

देविमाँ : तुझे कुछ पता नहीं बीना ? सुन्दर रस के लिए•••••।

बीना : जी हाँ•••••आप अपनी सुन्दरता का ऐसा विज्ञापन करें। ड्राइंग-रूम में अपनी तस्वीर टाँगें।

देविमाँ : बीना ! मुझ से ईर्ष्या हो रही है न !

बीना : जीजी ! मैं इसी के लिए डर रही थी, कि आप झट यह सोच बैठेंगी•••••नहीं तो; मैं जिस दिन से यहाँ आयी हूँ, उसी दिन मैं आप से यह कहना चाहती थी कि सौन्दर्य दिखावे की चीज़ नहीं।

देविमाँ : बन्द करो यह बकवास !

बीना : मैं भी यही सोचती हूँ !

देविमाँ : राजनीति की भाषा मुझ से मत बोलो ?

बीना : कैसे बोलूँ ?····

[जाने लगती है ।]

देविमाँ : बीना···· ! बीना··· !

[बीना के पीछे-पीछे अन्दर जाती हैं ।]

[दोनों शिष्य परदे के पीछे से दायें-बायें झाँक कर देखते हैं, और पैर दबाये हुए पुनः प्रविष्ट होते हैं ।]

शक्तिदेव : बीनाजी अच्छी तो हैं, पर ग़ुस्सा थोड़ा ज़्यादा है !

जैनाथ : हे राम ! यह बीनाजी कहाँ से आ गयीं ! हाय सुन्दर रस !

शक्तिदेव : आओ ! कुरसी पर बैठें । अहा, क्या बात है !

जैनाथ : भइया तुम्हीं कुरसी पर बैठो । मैं तो यहीं बैठता हूँ ।

[शक्तिदेव कुरसी पर बैठता है, और जैनाथ नीचे फ़र्श पर बिछी क़ालीन पर । दोनों आराम की मुद्रा में जैसे सोने की तैयारी करने लगते हैं ।]

जैनाथ : सो न जाना ! भीतर की ओर कान लगाये रखना । कहीं बीनाजी ने देख लिया तो···· ।

शक्तिदेव : चुप रह !

[दोनों शिष्य सोने से लगते हैं । कुछ ही क्षणों बाद कन्धे पर झोला और हाथ में डण्डा लिये कविराज पधारते हैं और कमरे में पाँव रखते ही घबरा जाते हैं ।]

कविराज : अयँ ! यह किस का निवास-स्थान है ? घर बदल दिया क्या ? यहाँ कौन रहने लगा ?

[वापस जाते-जाते फिर एक बार लौटते हैं ।]

हे भाई ! सुनो बन्धु ! ज़रा जागिए ! मेरी बात सुनिए !

जैनाथ : हैं ! कौन हैं ?

शक्तिदेव : चले जाओ यहाँ से ! 'डोंट डिस्टर्ब····' ।

जैनाथ : बकवास मत करो !

कविराज : कौन ? जैनाथ !

[दोनों शिष्य हड़बड़ा कर उठते हैं, और भाग कर गुरुजी का चरण-स्पर्श करते हैं और श्रद्धा-वश उन के सामान को लेते हैं ।]

कविराज : भाई, यह किस का कमरा है ? कोई और आ गया क्या ?

शक्तिदेव : गुरुजी, यह आप का ही कमरा है ! आइए····पधारिए ! 'कम इन' !

जैनाथ : आइए गुरुजी, इस आसन पर बैठिए ! [पुकारते हुए] देविमाँ ! सुमिरन ! गुरुजी आ गये !

[भीतर से देविमाँ और सुमिरन का प्रवेश । देविमाँ झुक कर कविराज के चरण-स्पर्श करती हैं । सुमिरन प्रणाम करता है । कविराज पूर्णतः हतप्रभ हैं ।]

देविमाँ : सुमिरन ! सामान अन्दर ले जाओ !

[सुमिरन सामान सहित भीतर जाता है ।]

देविमाँ : आइए····आइए ! आप इस तरह क्यों देख रहे हैं ? अरे !

यह आप ही का कमरा है। बैठिए। चाहे कुरसी पर बैठिए, चाहे आसन पर !

कविराज : अरे !

देविमाँ : इतना सुन्दर ड्राइंग रूम ! देखिए न, कितना सुन्दर वातावरण है !

कविराज : [इधर-उधर देखते-देखते] यह किस का चित्र है ? [आहत] देवि ! तुम्हारा चित्र ? ओह ! मेरे गुरु महाराज का चित्र कहाँ गया ?

देविमाँ : भीतर रखा है।

कविराज : मेरे गुरु महाराज का चित्र भीतर है। यहाँ तुम्हारा चित्र ! और वह सड़क और गली का स्वर....फल वाला....चाट वाला...बोतल वाला....।

देविमाँ : अब यहाँ किसी का शोर नहीं होता। सब को मना कर दिया है।

कविराज : बीना कहाँ है ? वह यहाँ से चली तो नहीं गयी ?

शक्तिदेव : अजी, वह अभी कहाँ गयीं !....और वह जायँ भी क्यों ?

जैनाथ : वह देखिए आ रही हैं !

[बीना का प्रवेश, गम्भीर मुख। सादर प्रणाम करती है।]

कविराज : प्रसन्न रहो ! यह सब क्या है बीना ? तुम ने किया है यह ? अरे, तुम बोल क्यों नहीं रही हो ? क्या....बात है ?

देविमाँ : बच्ची है बच्ची !

बीना : जीजी !

कविराज : क्या बात है बीना, मुझे बताओ।

देविमाँ : भोली है भोली ! कहती है कि सुन्दर रस का विज्ञापन न किया जाये।

बीना : हाय ! यह मैं ने कब कहा ?

कविराज : देवि, मैं घबड़ा रहा हूँ।

शक्तिदेव : आज्ञा दीजिए, गुरुजी ! हम लोग यह सब हटा दें !

[कुरसी उठाने लगते हैं।]

बीना : चुप रहो !

शक्तिदेव : गुरुजी, देखिए, यह हमें इसी तरह डाँटती हैं।

देविमाँ : [कविराज का हाथ पकड़े हुए] आइए····अन्दर आइए ! चलिए पहले ब्रेकफास्ट फिर लंच।]

[कविराज को सँभाले हुए देविमाँ अन्दर जाती हैं।]

देविमाँ : [जाते-जाते] बीना, तुम भी आओ न !

बीना : शुक्रिया···· !

[देविमाँ का प्रस्थान। बीना टूटी हुई गुड़िया को ठीक करने में लग जाती है।]

बीना : बन्दर कहीं के ! जिस पर हाथ लगाया, उसे सत्यानाश कर दिया।

शक्तिदेव : [सगर्व आसन पर बैठते हुए] हम गुरुजी के शिष्य हैं, और नहीं तो क्या ?

जैनाथ : थोड़े ही दिनों में हम सुन्दर हो जायेंगे, तब देखिएगा।

[बीना गुस्से से शिष्यों को देखती है।]

शक्तिदेव : जब घूर कर देखिएगा, तब पता चलेगा।

बीना : बेवक़ूफ़ हो तुम लोग !

शक्तिदेव : आप भी एक खुराक सुन्दर रस क्यों नहीं पी लेतीं ?

जैनाथ : परम सुन्दरी हो जायेंगी तब ! अपनी बहन को देखिए न !

बीना : चुप रहो !

शक्तिदेव : अवश्य हम चुप हो जायेंगे, पर स्मरण रहे, सुन्दर रस पी कर।

जैनाथ : पूरे ढाई महीने तक चुप रहेंगे।

शक्तिदेव : फिर आप मुझे देखिएगा।

जैनाथ : मुझे भी।

बीना : [असह्य क्रोध में] बत्तमीज़ कहीं के !

[आवेश में भीतर चली जाती है। दोनों शिष्य देखते रह जाते हैं]

शक्तिदेव : बीनाजी, ज़रा सा सुन्दर रस पी लें न, तो अनन्य सुन्दरी हो जायें।

जैनाथ : क्रोध भी कम हो जाये !

शक्तिदेव : सत्यम्।

जैनाथ : शिवम्।

शक्तिदेव : सुन्दरम्।

[क्रमशः मुद्रा बनाते रहते हैं, उसी बीच घबड़ाये हुए कविराज का प्रवेश।]

कविराज : चिट्ठी कहाँ है ? कहाँ हैं वकील साहब, केदार बाबू की चिट्ठी !

शक्तिदेव : जैनाथ तुम ने कहाँ रख दी ?

जैनाथ : तुम ने ही तो ली थी !

शक्तिदेव : तुम ने ली थी कि मैं ने !

सुमिरन : लड़िए नहीं, लड़िए नहीं। [देता हुआ] यह है चिट्ठी।

कविराज : कहाँ रख छोड़ी थी ?

[सुमिरन नतसिर भीतर चला जाता है। कविराज पत्र पढ़ने लगते हैं।]

शक्तिदेव : गुरुजी, वह बत्तमीज़ वकील आया था। कहने लगा कि मैं ने 'सुन्दर रस' का सेवन किया, मुझ पर कोई प्रभाव नहीं। ऐसा कहते हुए उसे तनिक भी संकोच न हुआ ! भला ऐसे कहना चाहिए उसे !

जैनाथ : झूठा कहीं का ! भाग गया नहीं तो। मुझे बड़ा क्रोध आ गया गुरुजी ! आप ने बताया है कि विनय विद्या का भूषण है, नहीं तो…।

कविराज : तुम लोगों ने ऐसा व्यवहार किया उन के संग ? बोलते क्यों नहीं ? क्या-क्या किया उन के संग ?

शक्तिदेव : गुरुजी, हम ने बड़ा आदर किया उन का। उन्हें आसन दिया। शीतल जल के लिए पूछा। हम ने प्रणाम भी किया।

जैनाथ : स्वागत और सम्मान भी दिया, पर वह आवेश में थे और हमें घूर-घूर कर देखते थे। कटुवाणी से बोलते थे, जैसे कुछ नशे में हों।

शक्तिदेव : हम ने उन्हें शीतल जल पिलाया। मृदुवाणी से हम उन से वार्तालाप करते रहे। हम लोग प्रसन्नमुख थे! आतिथ्य के समस्त नियमों का हम ने पालन किया।

कविराज : तुम लोगों ने यह पत्र मुझे क्यों नहीं दिया? यदि बीना न बताती तो यह पत्र मुझे कैसे मिलता? आतिथ्य में लगे रहे, अपना कर्म भूल गये!

जैनाथ : क्षमा कीजिए गुरुजी। देविमाँ का दर्शन करते ही हम लोग आनन्द-विभोर हो गये।

शक्तिदेव : ऐसे आनन्द-विभोर हुए कि···· कि····गुरुजी!

कविराज : अच्छा, अब जाओ तुम लोग। बोलो क्या बात है? बोलते क्यों नहीं? मैं आज्ञा दे रहा हूँ, तुम लोग अब अपने निवास-स्थान पर जाओ।

शक्तिदेव : गुरुजी! यह जो जैनाथ है न! जैनाथ तुम स्वयं क्यों नहीं कहते? गुरुजी, बात यह है कि····बात यह है कि! हम लिख कर आप को दे दें गुरुजी!

कविराज : जल्दी करो, क्या बात है? जाओ तुम लोग यहाँ से। मुझे एकान्त चाहिए····एकान्त! बोलो जल्दी!

जैनाथ : गुरुजी, यह जो शक्तिदेव है न, थोड़ा सा 'सुन्दर रस' चाहता है।

शक्तिदेव : नहीं, जैनाथ चाहता है गुरुजी!

कविराज : क्या कहा? सुन्दर होने की दवा चाहते हो? कुछ ज्ञान भी है तुम लोगों को? तुम लोग ब्रह्मचर्य आश्रम में हो। विद्याशास्त्र ही तुम्हारा सौन्दर्य है। अखण्ड ब्रह्मचर्य का पालन ही तुम्हारे लिए एक मात्र औषधि है। ब्रह्मचर्य को

क्या समझते हो तुम ? ज्ञानराशि को क्या समझते हो तुम ? यही मर्यादा है तुम्हारी ! मेरे दुःख को नहीं समझते तुम लोग । सत्यासत्य नहीं समझ सकते ?

शक्तिदेव : [बीच में] जी, इतनी कड़ी भाषा में मत डाँटिए !

[दूर से ही साष्टांग प्रणाम कर के दोनों शिष्य निकल भागते हैं । भीतर से देविमाँ आती हैं ।]

कविराज : हे ईश्वर ! तू मेरी रक्षा कर ! तू अन्तर्यामी है ।

देविमाँ : क्या बात है ? क्यों इतना परेशान हैं ? मुझे बताइए । क्या लिखा है ? चिट्ठी मुझे दीजिए !

कविराज : वकील मुझ पर मुक़दमा चलायेगा । उस के पास सबूत है ।

देविमाँ : क्या ?

कविराज : मैं ने उन्हें सुन्दर होने के लिए 'सुन्दर रस' दिया था । मैं ने दो सौ इक्यावन रुपये लिये हैं । पक्की रसीद है उस के पास ।

देविमाँ : वह अपने रुपये वापस ले सकते हैं । 'सुन्दर रस' खरीदने वालों की कमी नहीं है । जो मुझे देखता है वह सुन्दर रस की चर्चा करने लगता है ।

कविराज : देवि''''अन्दर जाओ, कोई आ रहा है ।

[देविमाँ अन्दर जाती हैं । कविराज दरवाज़े की ओर बढ़ते हैं ।]

केदार : मैं अन्दर आ सकता हूँ ? मैं ने कहा आप को मैं बधाई देता जाऊँ । बड़ा रंग है आप का ! यह कमरा, यह ठाट-बाट !

कविराज : आइए आइए, वकील साहब । आप को बहुत कष्ट हुआ ।

बधाई क्या ? सब ईश्वर की कृपा और आप लोगों की मंगलकामना है। विराजिए.....इस आसन पर विराजिए।

केदार : मेरा खत मिला आप को ?

[कुरसी पर बैठते हैं।]

कविराज : जी हाँ, जलपान कीजिए।

केदार : तो आप ने क्या फ़ैसला किया ? आप मेरे दो सौ इक्यावन रुपये वापस कर रहे हैं या नहीं ? मुझे देख रहे हैं न ! मुझ पर आप के सुन्दर रस का कोई असर नहीं। मैं अखबार में लिखूँगा इस के खिलाफ़ !

कविराज : सुमिरन, एक गिलास शीतल जल पिलाओ मुझे। आप को भी प्यास लगी होगी। मुँह सूख रहा है आप का ! आप सन्तोष कीजिए वकील साहब। धैर्य धारण कीजिए ! धैर्य ही पुरुष का मूल आभूषण है।

केदार : मुझे धैर्य का आभूषण नहीं चाहिए ! मुझे मेरे रुपये चाहिए—सूद दर सूद के सहित !

कविराज : अशान्त मत होइए वकील साहब ! हम-आप कहाँ भागे जा रहे हैं। हमें अपनेआप पर विश्वास रखना चाहिए।

केदार : मेरा जीवन तो नष्ट हो रहा है। ऊषा अगर मेरे हाथ से निकल गयी तो मैं.....तो मैं.....।

[वकील साहब आवेश में हैं। सुमिरन अन्दर से पानी लाता है, कविराजजी पानी पीते हैं। सुमिरन वकील साहब को देखता हुआ अन्दर जाता है।]

कविराज : वकील साहब, मेरा 'सुन्दर रस' कभी भी किसी पर असफल नहीं हुआ। रस मात्रा अथवा सेवन-विधि में कुछ

अन्तर रह गया होगा इसे मैं मान सकता हूँ। अन्तर पड़ने से····

केदार : क्या अन्तर होगा ? अपने हाथ से आप ने मुझे दवा पिलायी। ढाई महीने तक मैं चन्द्रोदय मालिश कराता हुआ कमरे में बन्द रहा। मेरी नयी-नयी वकालत खाक में मिल गयी। ढाई महीने कम नहीं होते !

कविराज : ढाई महीने तक आप बोले भी नहीं ? बोलिए—उत्तर दीजिए ! इस तरह आप मेरा मुँह न देखिए। आप ढाई महीने तक चुप थे ?

केदार : यह आप ने कहाँ बताया था ?

कविराज : ओ हो ! दोष पकड़ा गया। तभी तो कहूँ, वही सुन्दर रस मैं ने देवि को पिला कर इतना सुन्दर बनाया है। आप से भी अधिक गहरा रंग था इन का। मुख पर चेचक के दाग़, ज़रा सी नाक, छोटी-छोटी आँखें ! दाँत बाहर निकले हुए।

केदार : मुझे विश्वास नहीं पड़ता।

कविराज : आप के विश्वास और परम शान्ति के लिए मैं फिर से आप को बिना किसी दाम के 'सुन्दर रस' पिलाता हूँ। [अन्दर जा कर सुन्दर रस लाते हैं।] पन्द्रह दिन ही मौन रह कर इस का प्रभाव देखिए। रंग तो बदल ही जायेगा। सुन्दर रस महान् औषधि है वकील साहब !

केदार : यदि ऐसा हो जाये तो मैं फिर ढाई महीने खुशी से चुप रह लूँगा।

कविराज : एवमस्तु।

[केदार बाबू प्रार्थना के स्वर में हाथ जोड़े हुए]

केदार : ऊषा ! आशीर्वाद दो मेरी ऊषा !

[प्रार्थना मुद्रा में आँखें मुँदी ही रहती हैं ।]

कविराज : आइए, आप मेरे आसन पर बैठ जाइए । [बैठा कर] पूरब दिशा मुख कीजिए । सुन्दरपति, सोलह कलाधारी छविधाम, रसराज, रसिकबिहारी, श्रीकृष्ण भगवान् का ध्यान कीजिए । [ध्यान में ला कर] हाँ, अब मुख खोलिए ।

[सुन्दर रस पिला कर]

लेट जाइए । पूरा शरीर फैला दीजिए । कहीं सिकुड़न न रह जाये । दो क्षण और ! ध्यान करते रहिए । उसी छविधाम रसराज रसिकबिहारी श्रीकृष्ण भगवान् का । [रुक कर] अब शीघ्रता से उठ जाइए । [उठा कर] देखिए, शरीर के समस्त अंगों को खूब हिला-डुला दीजिए, ताकि समस्त नसों-द्वारा 'सुन्दर रस' शरीर-भर में व्याप्त हो जाये ।

[केदार बाबू समस्त शरीर हिलाते-डुलाते रहते हैं । बीच में कुछ बोलना चाहते हैं, कविराज बढ़ कर वकील साहब का मुख पकड़ लेते हैं ।]

कविराज : अखण्ड मौन ! [हाथ जोड़े हुए] छविधाम ! रसराज ! रसिकबिहारी श्रीकृष्ण भगवान् !

परदा

तीसरा अंक

[वही दृश्य, वही स्थान। दोपहर का समय है। नये ड्राइंग रूम में अब एक रेडियो भी दीख पड़ रहा है। सुमिरन मुदित-मन से रेडियो संगीत सुन रहा है।

कुछ ही क्षणों बाद गली के दरवाज़े से कविराज का प्रवेश.....पूर्णतः नये सूट में, पर आत्मव्यथा से पीड़ित हैं, और झुँझलाहट से हाथ पैर जैसे काँप रहे हैं। सुमिरन स्वामी को देखते ही रेडियो बन्द करना चाह रहा है, पर बन्द नहीं कर पा रहा।]

कविराज : बन्द करो रेडियो ! बन्द करो इसे !

[कविराज स्वयं रेडियो बन्द करना चाहते हैं, पर आवेश के कारण वह भी असफल हो जाते हैं। इस से झुँझलाहट और बढ़ती है। कविराज अपने नये वस्त्रों को उतार फेंकना चाहते हैं।]

कविराज : मैं यह वस्त्र नहीं पहन सकता ! मैं ऐसे बाल नहीं रख सकता !

[सुमिरन बेहद घबराया हुआ है, और अब डर जाता है।]

सुमिरन : महाराज ! महाराज !

[उसी समय गली के दरवाज़े से देविमाँ का प्रवेश। नये फ़ैशनेबुल वस्त्रों में सुसज्जित। आते ही पहले रेडियो बन्द करती हैं फिर कविराज की ओर बढ़ती हैं।]

देविमाँ : यह क्या कर रहे हैं आप ? क्या हो गया है आप को ? कोई देख लेगा तो क्या कहेगा ?

कविराज : पागल कहेगा, यही न ! लगता है अब मैं....। सुमिरन, शीतल जल लाओ !

[सुमिरन दौड़ा हुआ भीतर जाता है।]

देविमाँ : आप इस तरह लौट क्यों आये ? यह क्या कर रहे हैं आप ? नहीं आप कपड़े मत उतारिए ! देर हो जायेगी। डेढ़ बज गया। प्रेस कान्फ़्रेंस का समय हो गया।

[सुमिरन के हाथ से पानी पी कर कविराज कुछ स्वस्थ होते हैं।]

कविराज : कुछ भी हो ! कोई कुछ भी कहे ! मैं वहाँ नहीं जाना चाहता ! तुम्हें जाना हो तो अकेली जाओ ! मुझे क्षमा करो....क्षमा !

देविमाँ : जब आप की ऐसी ज़िद थी, तब आप ने प्रेस क्लब का निमन्त्रण क्यों स्वीकार किया ?

कविराज : सुमिरन ! मेरा दुपट्टा दे !

देविमाँ : नहीं !

[सुमिरन देविमाँ का मुँह देखता रह जाता है।]

देविमाँ : अन्दर जा !

[अन्दर जाता है ।]

कविराज : यह सब तुम ने किया है। रुपये लगा कर प्रस कान्फ़्रेंस तुम ने बुलाया है ।

देविमाँ : तो इस में हर्ज क्या है ? इस से आप को नाम मिलेगा, हमारे सुन्दर रस का व्यापार बढ़ेगा !

कविराज : प्रेस कान्फ़्रेंस में जो ऊटपटांग सवाल पूछे जायेंगे, उन के जवाब कौन देगा ?

देविमाँ : आप ऐ जो जवाब बन नहीं पड़ेंगे, उन्हें मैं दूँगी । और सवाल भी क्या होंगे ? यही कि सुन्दर रस क्या है ? कब बनाया, कैसे बनाया, कितने लोग इस से सुन्दर हुए, वग़ैरह, वग़ैरह !

कविराज : ओ हो ! तुम उन पत्रकारों को नहीं जानती ! वे लोग पहले पूछेंगे कि सुन्दर रस से अब तक आमदनी कितनी हुई ?

देविमाँ : मैं दूँगी इस का जवाब !

कविराज : फिर इनकम टैक्स वालों को मैं जवाब देता फिरूँगा ?

देविमाँ : आप इतना डरते क्यों हैं ?

कविराज : मैं तुम से डरता हूँ !

देविमाँ : मुझ से !

कविराज : हाँ, तुम जो वहाँ अपना और मेरा फ़ैशन परेड करना चाहती हो। पत्रकार पूछेंगे कि सुन्दर रस का पहला प्रयोग किस पर हुआ ? तब तुम फ़िल्मी हिरोइन की तरह चल कर उन्हें जवाब दोगी—'मुझ पर' देखो न मैं कितनी

सुन्दर हो गयी हूँ, फिर वे सारे पत्रकार तुम्हारे शरीर को घूर-घूर कर देखना शुरू करेंगे। और फिर....!

देविमाँ : इस में बुराई क्या है ? कल के अखबार में आप का चित्र छपेगा।

कविराज : मेरा नहीं, तुम्हारा चित्र छपेगा। और यही तुम चाहती भी हो।

देविमाँ : यह सब क्या कहने लगे हैं आप ?

कविराज : [हँस पड़ते हैं।]

देविमाँ : हाय राम ! यह किस तरह हँस रहे हैं ? आप की तबीयत तो ठीक है न !

कविराज : सुन्दर रस !

देविमाँ : हाँ, सुन्दर रस ! उस का मैं पूरे देश भर में विज्ञापन करूँगी। सारे अखबारों, सिनेमाघरों तथा स्टेशनों में बड़े-बड़े पोस्टर लगवाऊँगी।

कविराज : सुमिरन ! ....सुमिरन !

सुमिरन : [दौड़ा हुआ आता है।] महाराज !

कविराज : यह क्या हो रहा है ?

सुमिरन : पता नहीं महाराज !

देविमाँ : सुन्दर रस के व्यापार को मैं बिलकुल माडर्न ढंग से करूँगी। दिल्ली में इस का हेड ऑफ़िस, कलकत्ता, बम्बई, मद्रास में इस के बड़े-बड़े सेल्स डिपो....इसे मैं विदेशों में एक्सपोर्ट भी करूँगी !

कविराज : और मुझे किसी चौराहे पर ज़िन्दा लटका देना !

सुमिरन : यह किलो के भाव बिकेगा या····या !

देविमाँ : [घूमती हैं] चुप रह ! इन्हें अन्दर ले जा, मैं अकेली प्रेस कान्फ्रेंस में जा रही हूँ : लोग वहाँ हमारा इन्तज़ार कर रहे होंगे ।

कविराज : कहो तो तुम्हारे नौकर की हैसियत से मैं भी चलूँ !

सुमिरन : और मैं नौकर का नौकर का नौकर का नौकर···· ।

[देविमाँ सुमिरन को घूर रही हैं····सुमिरन घबड़ाया हुआ बोलता चला जा रहा है ।]

देविमाँ : यह क्या बत्तमीज़ी है ?

सुमिरन : आचार्यजी बताइए ।

देविमाँ : [सक्रोध] क्या कहा ?

सुमिरन : बताइए न, आप ने मुझे क्यों बुलाया ?

कविराज : मुझे यहाँ से कहीं दूर ले चल !

सुमिरन : मुझे भी ले चल ! [गा उठता है ।]

जहाँ कोई न हो ।
न हो····न हो····न हो !

[देविमाँ के घूरने से सुमिरन ग्रामोफ़ोन रिकार्ड की रुकी हुई सुई की तरह 'न हो', 'न हो', कर रहा है ।]

देविमाँ : [आवेश में] बत्तमीज़ कहीं का !

[सुमिरन अन्दर भागता है ।]

कविराज : लगता है, सुमिरन ने भी 'सुन्दर रस' की दवा पी ली !

देविमाँ : आप का मतलब कि जो यह दवा पीता है, वह····

कविराज : हाँ, वह इसी तरह से बेसिर पैर की बातें करने लगता है। वह तुम्हारी तरह !····

देविमाँ : चुप रहिए ! अन्दर जा कर अपना मुँह बन्द रखिए।

कविराज : बिलकुल नहीं। मैं अब से चिल्ला कर कहता हूँ, कहता रहूँगा कि यह सुन्दर रस···· !

देविमाँ : [चिल्ला कर] हाय !

[कविराज का मुँह खुला ही रह जाता है।]

देविमाँ : सुमिरन, यह देख, इन्हें क्या हो गया ?

सुमिरन : [आ कर] पानी····पानी····गंगाजल।

[भीतर भागता है, देविमाँ उन्हें सँभाल कर दीवान पर बिठाती हैं। सुमिरन उन्हें जल पिलाता है।]

कविराज : [पानी पी कर उच्च स्वर में] यह सुन्दर रस लोगों को पागल बनाता है। यह सुन्दर रस····

देविमाँ : हाय !

सुमिरन : हाय····हाय !

[कविराज का मुँह फिर उसी तरह खुला रह जाता है।]

देविमाँ : [गुस्से से] मतलब आप का मुँह बन्द नहीं होगा ?

सुमिरन : लगता तो ऐसे ही है। अरे महाराज, मुँह बन्द कीजिए, वरना मुँह में···[देविमाँ को देखते ही डर से] नहीं···· नहीं····आप····।

देविमाँ : कपड़ा ला दौड़ कर, कपड़ा, इन का मुँह बाँधना होगा !

सुमिरन : लीजिए····लीजिए····अभी लीजिए ! अभी लीजिए।

[अन्दर जाता है।]

देविमाँ : मैं कहती हूँ मुँह बन्द कीजिए, मुझे प्रेस कान्फ्रेंस में जाना है। इतनी देर हो गयी।

कविराज : [मुँह बन्द करते ही] यह सुन्दर रस झूठा है।

देविमाँ : हाय !

सुमिरन : [कपड़ा लिये हुए] हाय···हाय !

देविमाँ : खड़ा देखता क्या है। कस कर मुँह बाँध दे !

सुमिरन : नहीं बाबा, फायर ब्रिगेड वालों को बुलाओ, यह मेरी उँगली चबा डालेंगे····इन का माथा ठीक नहीं है बहूरानी !

देविमाँ : तेरा भी नहीं है !

[कपड़े से कविराज का मुँह बाँधती हैं। सुमिरन मदद करता है। कविराज को सँभाले हुए दोनों अन्दर ले जाते हैं। बाहर से भट्टाचार्य का प्रवेश]

भट्टाचार्य : अयँ ! कितना बदल गया यह घर। घर तो वही है। पता भी वही है। अरे, ग़लत घर में तो नहीं घुस गया। नहीं बिलकुल ग़लत नहीं है।

[सहसा भीतर से देविमाँ का प्रवेश। भट्टाचार्यजी उन्हें पहचानने की कोशिश करते हैं, पर असफल हो कर लौटने लगते हैं।]

भट्टाचार्य : क्षमा कीजिएगा। ग़लती से चला आया। पहले यहाँ मेरा परम मित्र रहता था—कविराज आयुर्वेदाचार्य !

देविमाँ : नमस्ते दादा !

भट्टाचार्य : दादा ! कौन ? ओ देवी माँ तुमी। तुमी देविमाँ। सुन्दर, सुन्दर। हम तो पहचान नेइं शका !

देविमाँ : आप की बहुत उमर है दादा। अभी-अभी वह आप को याद कर रहे थे। बैठिए····बैठिए।

भट्टाचार्य : मुझे अब भी याद कर रहा था। ओ हो। मैं ने चीठी लिखा था कि मैं अवश्य आप के दर्शन करने आऊँगा।

देविमाँ : बहुत-बहुत धन्यवाद।

भट्टाचार्य : तुम्हार दर्शन हो गया माँ।

देविमाँ : अब भी माँ। अब तो वैसा कोई डर नहीं!

भट्टाचार्य : हाँ, हाँ! किन्तु मैं डरता हूँ। सब औरत लोग से डरता हूँ। बात यह है न कि····।

देविमाँ : अच्छा, पहले बैठिए तो!

भट्टाचार्य : कहाँ बैठूँ? मेरे माफ़िक कोई जगह नहीं दीखता!

देविमाँ : आइए, इस कुरसी पर बैठिए!

भट्टाचार्य : ओ कुरसी उलट जायेगा। [**आसन की ओर बढ़ते हुए**] यह आसन आछा है। [**बैठ कर**] अहा हा। कितना उम्दा जगह है। देविमाँ, तुमी सुन्दर।····पहले आया था, तो यह जगह कैसा था गुरुकुल माफ़िक कमरा था। अब स्वर्ग माफ़िक हो गया। घर में पूर्ण विवेक आ गया न!

देविमाँ : सब आप की कृपा है दादा।

भट्टाचार्य : अब तो उस माफ़िक नहीं देखेगा न! याद है, कैसे देखा मुझे? अरे बाबा रे बाबा!

देविमाँ : [हँसती हुई] मुझे कुछ नहीं याद है। कविराजजी बताते थे कि मैं ने आप को बहुत तंग किया था।

भट्टाचार्य : उस ने केवल बताया होगा, दिखाया न होगा। [सहसा

खड़े हो कर उसी मुद्रा का अभिनय करते हुए] कौन हो तुम ? तुम्हारी तारीफ़ ? [हँस पड़ते हैं] अरे बाबा रे बाबा । हम तो घर में जा कर नींद में डर गया !

देविमाँ : मुझे तो कुछ याद नहीं ! हाँ, यह तो बताइए, आप बोल क्यों रहे हैं ? आप ने सुन्दर रस नहीं पिया क्या ?

भट्टाचार्य : हम ने तो चुपके से सुन्दर रस चाय में मिला कर पिया, पर उस ने, मेरी गिन्नी ने, नहीं पिया, मारने दौड़ी बाबा ।

देविमाँ : फिर आप बोलने क्यों लगे ? ढाई महीने तक चुप रहना चाहिए आप को ।

भट्टाचार्य : सुनो तो, सुनो । ढाई महीने का मेडीकल लीव लिया, घर आया । पत्नी को बताने गया कि, मैं मौन होने जा रहा हूँ । वह हम से पहले ही मौन हो गया । किन्तु हम ने उस का परवाह नहीं किया । कमरे में आया, सुन्दर रस पी कर चुप हो गया । उस ने गुस्से में आ कर क्या किया कि, कमरे में ताला डाल दिया । बाहर से साक्षात् चण्डी के माफ़िक बोला, 'बोल अब भी सुन्दर होना माँगता है ?' हम ने परवाह नहीं किया । हम तो सो गया उसी बन्द कमरे में । लेकिन स्वप्न में हम बोल उठा, 'आमि जल खाओ ।'

देविमाँ : फिर आप बोलने लगे । आप फिर चुप हो सकते थे । खैर, आप फिर से सुन्दर रस पी लीजिएगा ।

भट्टाचार्य : नहीं माँ नहीं । हमारे घर में इस सुन्दर रस ने महाभारत छेड़ दिया । [निकालते हुए] यह लीजिए सुन्दर रस । हम यही वापिस करने आया है ।

देविमाँ : क्यों ? ऐसा क्यों दादा ?

[सुमिरन आता है ।]

सुमिरन : कविराजजी ने यह लिख कर आप से पूछा है कि आप 'परेस कान्फ़रेंस' में कब जायेंगी ?

देविमाँ : पर अब कैसे जा सकूँगी ? देखिए न, अब तक इस घर में एक टेलिफ़ोन तक नहीं है। आप बैठिए, मैं पड़ोस से टेलिफ़ोन कर के अभी आयी । [जाते-जाते] सुमिरन, तू अन्दर जा ।

[देविमाँ तेज़ी से बाहर जाती हैं ।]

भट्टाचार्य : सुमिरन, अब हम जायेगा !

सुमिरन : आप ने भी सुन्दर रस पिया ? हमहूँ ने बस थोड़ा सा पिया है....देखिए न मेरा पोसाक ! [रुक कर] अरे आप इतना डरे-डरे से क्यों लगता है ? अरे देवीमाँ....ओह, परेस कानफ़रेंस में जाने को थीं, वही टेलिफ़ोन करने गयी हैं ।

भट्टाचार्य : कविराज कहाँ है ?

सुमिरन : भीतर हैं....अब उन की बारी है !

भट्टाचार्य : क्या........?

सुमिरन : सच बात कही महराज....!

भट्टाचार्य : क्या हुआ ? मुझे उस के पास ले चलो !

सुमिरन : हं....हं....हं....गजब हो जाई महराज ! वह परदे में हैं.... मामला बड़ा नाजुक है !

[बाहर से तेज़ी में देविमाँ आती हैं । सुमिरन डर कर अन्दर भागता है ।]

भट्टाचार्य : क्यों ? कविराजजी तोबियत कुछ खोराब है ?

देविमाँ : हाँ, मुँह में बड़ा दर्द है।

भट्टाचार्य : मुँह में....आह !....हम उसे देखने नहीं सकता क्या ?

देविमाँ : थोड़ी देर बाद !

[भीतर से उसी दशा में कविराज का प्रवेश। देविमाँ उन्हें दृश्य में आने से रोकती हैं, फिर भी कविराज नहीं मानते। भट्टाचार्य आश्चर्यचकित और अन्ततः भयभीत होते हैं।]

देविमाँ : इन की तबियत बहुत ज्यादा ख़राब है।

भट्टाचार्य : हाँ हाँ, मुँह बाँधने से अच्छा हो जायेगा।

देविमाँ : बोलना इन के लिए मना है।

भट्टाचार्य : तो ख़ुद सुन्दर रस इस ने अब पिया है ! ओ हो, जभी तो यह इतना सुन्दर लग रहा है ! अहा हा ! क्या छबि है ! वाह वाह !

देविमाँ : इन्हें डिस्टर्ब मत कीजिए !

[कविराज काग़ज़ पर कुछ लिख कर भट्टाचार्य को देते हैं।]

भट्टाचार्य : [पढ़ कर] अरे बाप रे बाप !....जल....जल....जल खाई आमि।

देविमाँ : क्या हुआ ?

भट्टाचार्य : क्या आप थोड़ी देर के लिए हम दोनों को अकेला नहीं छोड़ सकतीं ?

देविमाँ : नहीं ! मामला बड़ा सीरियस है !

भट्टाचार्य : किरपा कारो देवी !

देविमाँ : [चुप हैं ।]

कविराज : [सहसा पागलों की तरह चिल्ला कर] किरपा करो देवि····बचाओ····बचाओ····।

[भट्टाचार्य और कविराज दोनों मिल कर मुँह में बँधे वस्त्र को खोलते हैं ।]

कविराज : [मुक्त होते ही] यह सुन्दर रस झूठा है, मैं इस का व्यापार नहीं कर सकता ! यह झूठ है, ग़लत है····।

कविराज : यह सुन्दर रस झूठा । मैं इस का व्यापार नहीं····

[कविराज यही वाक्य सारी बातों के उत्तर में तोते की तरह रटते रहते हैं ।]

भट्टाचार्य : कविराज !

कविराज : [वही रट]

भट्टाचार्य : अरे बाप रे बाप !···कविराज, मेरी बात तो शोनो !

कविराज : [वही रट]

देविमाँ : देखिए न इन की हालत । मैं ने तभी इन का मुँह बाँध दिया था ।

भट्टाचार्य : 'ओ वेरी सीरियस', बाँधो ! बाँध दो इस का मुँह !

[कविराज अन्दर भागते हैं । दोनों उन के पीछे भागते हैं । वही रट लगाये हुए हैं । भीतर से बाहर और गली में अदृश्य हो जाते हैं ।]

देविमाँ : [परेशान] सुमिरन ! सुमिरन !

सुमिरन : [दौड़ा हुआ आता है ।] किधर गये ?

देविमाँ : बाहर गये हैं। जा उन्हें किसी भी तरह वापस ला !

[सुमिरन बाहर जाता है।]

भट्टाचार्य : माफ़ी···क्षमा····अब हम भी बाहर जायेगा ! नहीं तो कहीं हमारा माथा···।

देविमाँ : ऐसा नहीं हो सकता। सुन्दर रस पीने से किसी का माथा नहीं खराब होता।

भट्टाचार्य : सच !········

देविमाँ : बिलकुल सच !

भट्टाचार्य : एक बात पूछूँ, बुरा मत मानिएगा, आप उस तरफ़ मुँह कर लीजिए, तब पूछूँगा····ज़रा डर लगता है···तब आप का माथा क्यों ख़राब हुआ था ?

देविमाँ : पता नहीं, मुझे कुछ भी नहीं मालूम !

भट्टाचार्य : कविराज का माथा क्या ठीक है ?

देविमाँ : बिलकुल !····बिलकुल ठीक है····वह यह सब 'सुन्दर रस' के ख़िलाफ़त में कर रहे हैं।

[सुमिरन आता है।]

सुमिरन : कोई घबड़ाये के बात नहीं है ! महाराजजी चुपचाप मंगल हलवाई की दुकान पर जलेबी और दही खाय रहे हैं। मुझे भी दिया····।

देविमाँ : कुछ बोले चाले नहीं ?

सुमिरन : कुछ भी नहीं जी।

देविमाँ : ठीक से यहाँ खड़ा रह ! मैं उन्हें अभी संग ले आती हूँ।

सुमिरन : नहीं नहीं, आप मत जाइए, नाहीं तो महाराजजो भड़क जायेंगे।

[देविमाँ तेज़ी से बाहर जाती हैं।]

सुमिरन : कहिए तो आप की कुछ मेहमानी करूँ !

भट्टाचार्य : नहीं बाबा नहीं। सब पूरन हो गया !

सुमिरन : यानी ? अगर····मगर····इफ़····बट····बिकाज़····।

भट्टाचार्य : यह सब तू क्या बक रहा है ?

सुमिरन : मेम साहब ने बोला है····।

भट्टाचार्य : मेम साहब !

सुमिरन : [हँसता है] अरे देविमाँ ही अब मेम साहब हो गया···· समझे ?

भट्टाचार्य : समझा, भाई समझा !

सुमिरन : यानी क्या समझे ?

भट्टाचार्य : [घबड़ा गये हैं।]

सुमिरन : यानी····अगर····मगर····इफ़····बट····बिकाज़। बोलिए क्या समझे ?

भट्टाचार्य : हम बोल देता है, तू अगर इस माफ़िक हम से बत्तमीजी करेगा तो हम अभी तेरी शिकायत करेगा ?

सुमिरन : यानी····अगर····मगर····इफ़····बट····बिकाज़। [हँस पड़ता है।] अरे सुन्दर होने के लिए यह इकिड़ बिकिड़ बोलना ज़रूरी होता है····ये कपड़े···वह डराइंग रूम···· हाइ इस्टंडड़ ऑफ़ लिविंग····समझे क्या समझे····यानी अगर मगर इफ़ बट बिकाज़····।

भट्टाचार्य : चुप रह····· !

[बाहर से देविमाँ कविराज को अपने संग ले आती हैं। उन्हें देखते ही सुमिरन भीतर भागता है।]

भट्टाचार्य : हम जायेगा, नाहीं तो हम यहाँ पागल हो जायेगा ! नमोस्कार·····

[तेज़ी से जाने लगते हैं, देविमाँ बढ़ कर उन्हें रोक लेती हैं। कविराज चुपचाप दीवान पर बैठ गये हैं।]

भट्टाचार्य : मेम साहब आप चाहता क्या है ?

देविमाँ : मेम साहब ?

भट्टाचार्य : हाँ, आप का नौकर बोलता है कि अब आप का नाम मेम साहब हो गया !

[कविराज का सहसा हँस पड़ना। देविमाँ के देखते ही चुप।]

भट्टाचार्य : आप का नौकर अगर····मगर····इफ़····बट····बिकाज की भाषा में हम से बात करता है !

[कविराज की फिर वही हँसी। देविमाँ का घूर कर देखना। हँसी बन्द।]

भट्टाचार्य : हाँ हाँ, ठीक बात है ! सुन्दरता के लिए यह सब कितना जरूरी है। और आप को सुन्दर रस का व्योपार भी करना है।

देविमाँ : इस में बुरा क्या है ? और इस के लिए हमें विज्ञापन करना भी चाहिए। यही हमारी रोज़ी भी तो है। ईश्वर की कृपा से सुन्दर रस का इतना नाम हो गया है। इस के व्यापार को मैं सारे देश में चलाना चाहती हूँ। इस के

लिए एक सुन्दर सा दफ़्तर, एक शो रूम, हर शहर में इस की एजेंसी। सोचिए दादा, आज इस तरह कौन सुन्दर होना नहीं चाहता। सुन्दर रस कितना महान् आविष्कार है। इस का प्रथम प्रयोग मुझ पर हुआ है। देखिए न मुझे !

[कविराज की वही हँसी]

भट्टाचार्य : माफ़ करो बाबा, कम से कम मैं और मेरी वाइफ़ ऐसी सुन्दरता नहीं चाहता !

देविमाँ : क्यों ?

भट्टाचार्य : क्योंकि पहले रस से माथा ख़राब होता है !

देविमाँ : यह झूठ है। मैं कितनी बदशकल थी पहले, इसी रस ने मुझे इतना सुन्दर बनाया है !

भट्टाचार्य : कविराज, तुम पर हमारा और गुरु महाराज का कसम है, तुम सब सही-सही बात बताय दो !

कविराज : [**सहसा उठ कर**] भाइयो और बहनो, तथा मेम साहब [**देविमाँ की ओर देख कर**] अब मुझे सारा सच कहना ही होगा। मेरी यह पत्नी····।

भट्टाचार्य : अरे धर्मपत्नी बोलो····।

कविराज : हाँ हाँ धर्मपत्नी, देवि कभी भी बदशकल नहीं थीं। पहले तो यह आज से कहीं ज़्यादा सुन्दर थीं। विवाह के कुछ ही दिनों बाद मैं कुछ विशेष आयुर्वेदिक औषधियाँ बनाने में लगा था। दिमाग़ तेज़ करने की एक नयी दवा मैं ने बनायी। उस की पहली खुराक मैं ने इन्हें पिलाया !

भट्टाचार्य : ओह, तुम ने इन पर 'इक्सपेरिमेंट' किया !

कविराज : और मेरा दुर्भाग्य कि इन के मस्तिष्क में तभी विकार आ गया।

भट्टाचार्य : यानी, यह किंचित् पागल हो गयीं।

देविमाँ : यह झूठ है। बकवास है, कोरी कल्पना है!
[तेज़ी से अन्दर जाती हैं।]

कविराज : उन दिनों मेरी आर्थिक हालत बहुत बिगड़ गयी। फिर मैं ने यही 'सुन्दर रस' दवा बनायी, और इस की बिक्री के लिए मैं ने यह झूठा प्रचार किया कि इसी दवा से मेरी बदशकल पत्नी इतनी सुन्दर हुई हैं। मुझे यह पता नहीं था कि मेरे उस झूठ की इतनी बड़ी सज़ा मुझे झेलनी होगी। मित्र, मेरी सहायता करो! मुझे इस झूठ से छुटकारा दो!

भट्टाचार्य : अरे बाबा, तुम्हें मुक्ति देने वाली भीतर है भीतर! आवो मेरे संग। हे भगवान्.....!

[दोनों भीतर जाते हैं।]

[कुछ ही क्षणों बाद दरवाज़े के परदे को हटा कर शक्तिदेव और जैनाथ का प्रवेश। दोनों आधुनिक फ़ैशन के पहनावे में हैं। पूर्णतः नये अन्दाज़ और परिवर्तित मुद्रा में। आते ही इधर-उधर दृष्टि डाल कर, आपस में हाथ के संकेतों से कुछ निर्णय करते हैं। मुँह से न बोल सकने की विवशता के कारण दोनों हाथ से ताली बजाते हैं। भीतर से सुमिरन आता है। देखते ही वह पहले तो घबड़ाता है, फिर उन्हें पहचानने लगता है। दोनों शिष्य उस से संकेत करते हैं कि सुन्दर रस पीने के कारण वे बोल नहीं सकते।]

सुमिरन : कैसे आये हैं आप बाबू लोग ?

शक्तिदेव : [एक चिट्ठी दिखाता है ।]

सुमिरन : बुलाऊँ गुरुजी महाराजजी को ? अन्दर हैं ।

जैनाथ : [एक पत्र यह भी दिखाता है । और हाथ से मना करता है कि गुरुजी को न बुलाये ।]

सुमिरन : बैठिए आप लोग । इफ़....बट....बिकाज़....।

शक्तिदेव : कुं....कु....कुं....[हाथ से एक स्त्री का संकेत] ।

जैनाथ : कुं....कुं....कुं....[काग़ज़ पर झट लिखता है ।]

सुमिरन : [काग़ज़ पर नाम पढ़ कर] बीनाजी । बीनाजी तो चली गयीं ।

[दोनों शिष्य परस्पर दुःख से देखते हैं ।]

सुमिरन : बैठिए आप लोग !

[दोनों आपस में निर्णय कर माँजी को बुलाने के लिए सिर हिलाते हैं ।]

सुमिरन : अच्छा बैठिए, मैं मेम साहब को बुलाता हूँ ।

[सुमिरन अन्दर जाता है । दोनों शिष्य पाकेट से आइना निकाल कर अपनी मोहिनी छवि को निरखने लगते हैं । भीतर से देविमाँ का प्रवेश । दोनों नये ढंग से प्रणाम करते हैं । देविमाँ उन्हें पहचान कर प्रसन्न होती हैं ।]

सुमिरन : सुन्दर रस पीया है इन लोगों ने !

देविमाँ : हाँ, तभी देखो न । कितने अच्छे हो गये !

[दोनों सगर्व परस्पर देखते हैं ।]

देविमाँ : आओ बैठो । बैठो न । खड़े क्यों हो ?

[शक्तिदेव जैनाथ को संकेत करता है, और जेनाथ शक्तिदेव को। दोनों अपनी-अपनी चिट्ठियों को आँख से लगाते हैं, हृदय से लगाते हैं।]

देविमाँ : कैसी चिट्ठी है यह ?

[दोनों अपनी-अपनी चिट्ठियाँ देविमाँ को दे देते हैं। देविमाँ चिट्ठी को खोलने चलती हैं कि दोनों संकेत से न खोलने के लिए कहते हैं। देविमाँ चिट्ठियों को मेज़ पर रख कर।]

देविमाँ : बैठो। खड़े क्यों हो ?

सुमिरन : ये लोग शरमा रहे हैं।

[उसी समय भीतर से भट्टाचार्य के संग कविराज का प्रवेश। दोनों शिष्य गुरुजी को नये ढंग से प्रणाम करते हैं। भट्टाचार्य बैठ जाते हैं।]

कविराज : कौन ? कौन हो तुम लोग ?

देविमाँ : आप इन्हें नहीं पहचानते ? यह हैं आप के प्रिय शिष्य शक्तिदेव, जैनाथ।

कविराज : असम्भव। ये कौन हैं, क्या हुआ इन्हें ?

सुमिरन : महाराजजी, इन लोगों ने सुन्दर रस पिया है।

कविराज : सुन्दर रस। सुन्दर रस पीया है ? कहाँ मिला इन्हें सुन्दर रस, किस ने पिलाया ?

देविमाँ : मैं ने।

कविराज : तुम सब को पागल बनाओगी। [शिष्यों की ओर बढ़ते हुए] दूर हो जाओ तुम लोग मेरी आँखों के सामने से।

म्लेच्छ कहीं के ! गुरुकुल और संस्कृत के विद्यार्थी, और ये वस्त्र-विन्यास । यह सूट-बूट । मुख में पान । आँखों में काजल । स्त्रियों की तरह सँवारे हुए ये केश । हट जाओ यहाँ से । भाग जाओ ।

[सुमिरन डर के मारे भीतर भाग गया है । दोनों शिष्य सभय दरवाज़े पर जा खड़े होते हैं ।]

देविमाँ : क्यों इस तरह चीख़ रहे हैं ? यह कौन सा तरीक़ा है ?

कविराज : नहीं हटोगे तुम लोग यहाँ से ?

शक्तिदेव : [सहसा मुँह थामे हुए] क्षमा·····क्षमा गुरुजी !

[और सचेत हो कर पुनः अपना मुँह दबोच लेता है, जैनाथ उसे सँभालता है और दोनों गली में भागते हैं ।]

देविमाँ : इतना ग़ुस्सा आप को शोभा नहीं देता ।

कविराज : हाँ ग़ुस्सा केवल स्त्रियों को ही शोभा देता है । जो सुन्दर है उसे·····।

देविमाँ : वे आप के शिष्य थे·····। सुन्दर रस की उन को इच्छा थी । सुन्दर रस का उन पर इतना असर पड़ा है । इस में इतने ग़ुस्से की क्या बात ? इस से तो सुन्दर रस का विज्ञापन ही हो रहा है ।

कविराज : चुप रहो । बहुत सब्र किया मैं ने !

देविमाँ : अच्छे आधुनिक कपड़े पहनना, सफ़ाई और सलीक़े से रहना आप की दृष्टि में बुरा है । जीवन भर गुरुकुल और आश्रम में रहे·····तभी आप को यह सब·····।

[देविमाँ चिट्ठियाँ लिये आवेश में भीतर चली जाती हैं ।]

भट्टाचार्य : सुमिरन, एक गिलास शीतल जल लाओ। ओ माँ ? यह सब क्या हो रहा है ?

कविराज : यह सब मेरे सुन्दर रस का नतीजा है भट्टाचार्य। मैं तुम को क्या बताऊँ ? बहुत दुःख है मुझ को। मुझ से कुछ कहा नहीं जा रहा है।

[सुमिरन एक गिलास जल भट्टाचार्यजी को पिला जाता है।]

भट्टाचार्य : ओ बाबा, अगर मेरी पत्नी सुन्दर रस पी लेती.... ईश्वर सब अच्छा ही करता है।

कविराज : अच्छा तो करता है पर वह उस मनुष्य को उलझा अवश्य देता है, जो अनुचित साधनों का प्रयोग करता है।

भट्टाचार्य : ओ बाबा, तुम ने तो हम को 'कन्फ्यूज़' कर दिया। अब हम जायेगा कविराज, तुम्हारा यह खतरनाक सुन्दर रस वापस करने आया था।

कविराज : पर दोस्त, मेरी पत्नी का क्या होगा ?

भट्टाचार्य : वही उपाय उत्तम रहेगा.... कभी-कभी नीम पागल जैसा बरताव किया करो, मैं ने मार्क किया है, अच्छा अभिनय करते हो तुम....बक-अप....इसी से शायद तुम्हारी वाइफ़ डर जायें।....वह आ रही हैं। बस, शुरू होइ जाव....! बक अप...। डरना नेहीं....! उत्तम अभिनय हुआ तो.... मामला पार....।

[दोनों खुली चिट्ठियाँ लिये हुए देविमाँ आती हैं।]

देविमाँ : मैं इसे बिलकुल नहीं बरदाश्त कर सकती। बुलाओ उन पागल शिष्यों को।

कविराज : [उसी तरह हँसते हैं ।] क्या हुआ मेम साहब ?

देविमाँ : देखो यह ग़जब, तुम्हारे बेहूदा शिष्यों ने मेरी बहन बीना के नाम प्रेमपत्र लिखा है ।

कविराज : प्रेमपत्र''' तुम ने मुझे कभी प्रेमपत्र नहीं लिखा''''हा''''हा हा हा हाय हाय !

देविमाँ : हाय राम, यह किस तरह हँसते हैं ?

कविराज : हाय राम''''हाय राम''''जब बोलो तब रामै राम''''खाली जिम्भा कौने काम''''!

देविमाँ : हे भगवान् ! दादा, बचाइए''''बचाइए''''!

भट्टाचार्य : अब हम जाइगा कविराज, तुम से हम एक आखिरी बात करता है''''सुन्दर स्त्री 'आलवेज़ खतरनाक''''!

कविराज : [रटते हैं] 'सुन्दर स्त्री आलवेज खतरनाक' !

देविमाँ : आह, अब क्या होगा ?

भट्टाचार्य : तुम से भी एक आख़िरी बात कहता हूँ'''कविराज का माथा किंचित्''''किंचित्''''

[यह कहते हुए भट्टाचार्य बाहर चले जाते हैं । बाहर गली में काग़ज़-बोतल वाले की आवाज़ उठती है ।]

कविराज : सुनो ऐ काग़ज़ वाला !

देविमाँ : आप कहाँ जा रहे हैं ?

कविराज : हाय, आप कहाँ जा रही हैं ?

देविमाँ : हाय राम !

कविराज : [गाते हैं]

मारि कटारी मरि जाना,
हो अँखिया केहू से लगाना ना, हो लगाना ना ।

[पागलों की तरह देविमाँ पर झपटते हैं । वह भागती हैं ।]

देविमाँ : सुमिरन····सुमिरन····!

सुमिरन : [उठाता है ।] पुलिस बुलाऊँ !

देविमाँ : भट्टाचार्य को···भट्टाचार्य को !

कविराज : [अभिनय से] अमी तुमी भालो बासी
मम्मी तुमी भालू नासी !
अमी तुमी भालो बासी
ले लो करवट कासी···· !

सुमिरन : [उसी धुन में] अमी तुमी भालो बासी इफ़ दैट बिकाज ····बट !

देविमाँ : हे भगवान्, सारा घर पागल हो गया !

[भट्टाचार्यजी आते हैं ।]

देविमाँ : दादा ! बचाओ हमें !

भट्टाचार्य : यह कैसा गोलमाल ! हम शोर सुन कर भागा आइ रहा है !

[कविराज वही गाना गा रहे हैं ।]

भट्टाचार्य : मामला तो बहुत 'सीरियस' है ! हम तो बोल दिया, अब आप के हीं हाथ में है सब !

देविमाँ : मेरे हाथ में ?

भट्टाचार्य : झूठ और प्रपंच से कोई शुन्दर नेईं हो शेकता ! आप को यह स्वीकार करना होगा । नेई तो झूठ का नतीजा ये हो होगा । आप जैसे थीं पहले, वैसे अब कविराज होइ गया ....यह है सुन्दर रस का 'रिजल्ट' !

देविमाँ : नहीं, नहीं !

[दोनों हँस-गा रहे हैं ।]

भट्टाचार्य : झटपट सच बोल दीजिए, सुन्दर रस क्या है ?

देविमाँ : झूठ है सुन्दर रस.... !

सुमिरन : जी अगर मगर, इफ़ बट बिकाज !

कविराज : जी आलू भाटा सेम प्याज ।

सुमिरन : जी अगर मगर इफ़ बट समथिंग !

कविराज : सब बन्दर भालू और नथिंग !

देविमाँ : ओ काग़ज़-बोतल वाले ! चल अन्दर आ !

[देविमाँ तेज़ी से अन्दर जाती हैं ।]

भट्टाचार्य : कहो की खबर ?

कविराज : भालो....भालो....भालू....भालू.... !

भट्टाचार्य : अरे, अब वह अन्दर गयी !.... ।

कविराज : गयी ?....सुमिरन, जा अन्दर.... सुन्दर रस की सारी बोतलें निकाल फेंक.... ! घर में कहीं एक बूँद भी सुन्दर रस न रहने पाये !

[सुमिरन अन्दर जाता है । ग़ुस्से में बाहर से वकील केदार साहब आते हैं ।]

केदार : सीधे से मेरे दो सौ इक्कावन रुपये वापस करते हो या नहीं ?

[कविराज का वही अभिनय]

केदार : मैं तुझ पर चार सौ बीसी का मुक़दमा चलाने जा रहा हूँ !

[कविराज को वही अभिनय]

भट्टाचार्य : भाई, इन का माथा किंचित्‌.....किंचित्‌ !

[अन्दर से देविमाँ आती हैं ।]

केदार : मेरे सारे रुपये देते हो या नहीं !

देविमाँ : ये लो ! और यहाँ से दफा हो जाओ !

केदार : जाऊँ.....पर कहाँ जाऊँ ? इस ने मुझे दुबारा पिलाया है ! यह देखो मेरी चाल..... !

देविमाँ : वह सुन्दर रस झूठा था !

केदार : हाय सच झूठा था !

[मूर्तिवत्‌ गिरने लगता है, कविराज सँभाल लेते हैं]

कविराज : हाय, आप तो कितने सुन्दर हैं ।

केदार : सुन्दर हूँ ?.....वेरी गुड ...अब सीधे उस के पास जाता हूँ ।

[बाहर प्रस्थान]

देविमाँ : और अब आप कैसे हैं ?

कविराज : बड़ी लाज लग रही है !

देविमाँ : आप कैसे हैं दादा ?

भट्टाचार्य : आमी कविराज को भालोवासी !

[कविराज को बाँहों में लिये हुए दायीं ओर बढ़ कर खड़े हो जाते हैं। भीतर से एक बोतल लिये हुए सुमिरन आता है।]

सुमिरन : ले लो.... दस पैसे में एक बोतल सुन्दर रस....ले लो....ले लो.... मुफ़्त में लुटा दिया....लुटा दिया.... !

देविमाँ : सुनो....सुनो, इस के चक्कर में कोई न आये....कोई न आये !

कविराज : और तुम्हारे चक्कर में ?

देविमाँ : और तुम्हारे चक्कर में ?

कविराज : कोई न आये....कोई न आये.... !

देविमाँ : कोई न आये....कोई न आये.... !

भट्टाचार्य : अब शव घर जाये....घर जाये !

[इस शोर में सुमिरन की आवाज़ खो जाती है।]

परदा

भारतीय ज्ञानपीठ

उद्देश्य

ज्ञान की विलुप्त, अनुपलब्ध
और अप्रकाशित सामग्री का
अनुसन्धान और प्रकाशन
तथा लोक - हितकारी
मौलिक-साहित्य का निर्माण

●

संस्थापक
श्री शान्तिप्रसाद जैन

अध्यक्षा
श्रीमती रमा जैन

●

मुद्रक : सन्मति मुद्रणालय, दुर्गाकुण्ड मार्ग, वाराणसी-५